मूल्य : ₹ 50

अगस्त 2026

आई.एस.ओ. 9001: 2015 संगठन

भाकृअनुप
ICAR

खेती

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

• इस अंक में •

कृषि उद्यमिता से ग्रामीण भारत में आजीविका सुरक्षा

भारत विस्तार-डिजिटल कृषि का नया आयाम

सामुदायिक प्रयासों से मत्स्य संरक्षण

भेड़ और बकरियों के उत्पादों का मूल्यसंवर्धन

पर्व, परंपरा और कृषि विज्ञान:
भारतीय ज्ञान से विकसित कृषि की ओर

‘कृषिर्धन्या कृषिमेध्या कृषिर्लोकस्य जीवनम्’ अर्थात् कृषि केवल जीविका का साधन नहीं, बल्कि समाज के जीवन, समृद्धि और सभ्यता का आधार है। भारत की सांस्कृतिक परंपरा इस सत्य की साक्षी रही है कि हमारे पर्व, हमारी खेती और हमारी जीवनशैली एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। रक्षाबंधन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी और गणेश चतुर्थी ऐसे पर्व हैं, जो वर्षा ऋतु के मध्य मनाए जाते हैं, जब खेतों में खरीफ फसलें अपनी बढ़वार पर होती हैं, धरती हरित आभा से आच्छादित होती है और किसान का परिश्रम आशा में परिवर्तित होने लगता है। भारतीय कृषि पंचांग में यह समय प्रकृति और उत्पादन, दोनों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है।

नई भारतीय लोकजीवन ने सदियों के अनुभव से कृषि और ऋतुओं के संबंध को कहावतों में पिरोया है। ‘सावन साग, भादो दही, क्वार दूध, कार्तिक मही’ केवल लोकभाषा की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि ऋतु-अनुकूल पोषण का वैज्ञानिक संदेश है। इसी प्रकार ‘जैसा बीज, वैसी फसल’ गुणवत्तापूर्ण बीज और उत्पादन के वैज्ञानिक सिद्धांत का सहज रूप है, जबकि ‘उत्तम खेती, मध्यम बान, निषिद्ध चाकरी, भीख निदान’ कृषि की गरिमा, आत्मनिर्भरता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के महत्व को रेखांकित करता है। यह लोकज्ञान आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना आधुनिक कृषि विज्ञान।

इन पर्वों की खाद्य परंपराएं भी भारतीय कृषि जैव-विविधता का जीवंत उत्सव हैं। रक्षाबंधन, तेजा दशमी, हरियाली तीज और हरियाली अमावस्या की खीर, जन्माष्टमी का माखन, दही, पंजीरी और मखाना तथा गणेश चतुर्थी के मोदक, नारियल, गुड़, तिल और चावल ये सभी स्थानीय कृषि उत्पादों पर आधारित संतुलित एवं पोषण-संपन्न आहार हैं। वर्षा ऋतु में शरीर की पाचन क्षमता और संक्रमणों के प्रति संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए इन खाद्य पदार्थों का चयन किया गया था। आज पोषण विज्ञान भी स्वीकार करता है कि स्थानीय, मौसमी और विविध आहार स्वास्थ्य, प्रतिरक्षा और पोषण सुरक्षा का सबसे प्रभावी आधार है। वास्तव में, भारतीय त्योहार ‘खेती से थाली तक’ की अवधारणा का प्राचीन और सफल उदाहरण हैं।

किसानों के लिए यह समय अत्यंत महत्वपूर्ण है। धान, मक्का, बाजरा, ज्वार, अरहर, सोयाबीन, मूंगफली, कपास तथा बागवानी फसलें वृद्धि एवं पुष्पण की अवस्था में होती हैं। समय पर पोषक तत्वों का प्रबंधन, जल निकास, समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन, मौसम आधारित कृषि परामर्श तथा डिजिटल कृषि सेवाओं का उपयोग उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ जोखिम को भी कम करता है।

> ‘‘हमारे पूर्वजों ने प्रकृति को प्रतिद्वंदी नहीं, बल्कि सहयोगी माना। फसलचक्र, मिश्रित खेती, बहुफसली प्रणाली, गोबर एवं कम्पोस्ट का उपयोग, पशुपालन, खेत की मेड़ों पर वृक्षारोपण, वर्षा जल संचयन और स्थानीय बीजों का संरक्षण भारतीय कृषि की अमूल्य धरोहर हैं। आज विश्व जिन अवधारणाओं को टिकाऊ खेती, प्राकृतिक संसाधन संरक्षण, जलवायु-स्मार्ट कृषि और सर्कुलर बायोइकोनॉमी के नाम से अपनाने की दिशा में अग्रसर है, उनकी जड़ें हमारी पारंपरिक कृषि प्रणालियों में गहराई से विद्यमान हैं। आधुनिक विज्ञान ने इन अनुभवों को नई तकनीकों, उन्नत किस्मों, डिजिटल कृषि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा सटीक कृषि प्रबंधन के माध्यम से और अधिक प्रभावी बनाया है।’’

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का सतत प्रयास है कि विज्ञान का प्रत्येक नवाचार खेत तक पहुंचे और किसान का प्रत्येक अनुभव अनुसंधान का विषय बने। ‘प्रयोगशाला से खेत’ और ‘खेत से प्रयोगशाला’ की यह द्विपक्षीय प्रक्रिया ही कृषि अनुसंधान को समाजोपयोगी बनाती है। जलवायु सहिष्णु किस्मों का विकास, पोषण संवेदी कृषि, श्री अन्न (मोटे अनाज), दलहन एवं तिलहन उत्पादन, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, डिजिटल कृषि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित निर्णय सहायता प्रणाली की अवधारणा-ये सभी भविष्य की कृषि के प्रमुख आधार हैं। विकसित भारत की परिकल्पना तभी साकार होगी जब हमारी कृषि अधिक उत्पादक, अधिक लाभकारी, अधिक पोषण सुरक्षित और अधिक पर्यावरण अनुकूल बनेगी।

भगवान श्रीकृष्ण का कर्मयोग, गोसंवर्धन और प्रकृति के प्रति अनुराग, भगवान गणेश का विवेक और नवाचार तथा रक्षाबंधन का संरक्षण का संदेश आज हमारी कृषि के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है। हमें केवल फसलों की ही नहीं, बल्कि अपनी मिट्टी, जल, जैव विविधता और कृषि विरासत की भी रक्षा करनी है। ‘अन्नं बहु कुर्वीत’ अर्थात् अन्न की प्रचुरता उत्पन्न करो। भारतीय ज्ञान परंपरा का यह संदेश आज नए अर्थों में हमारे सामने है। अब हमारा लक्ष्य केवल अधिक उत्पादन नहीं, बल्कि पोषण संपन्न, संसाधन संरक्षक, जलवायु अनुकूल और किसान केंद्रित कृषि व्यवस्था का निर्माण होना चाहिए।

रक्षाबंधन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी और गणेश चतुर्थी के पावन अवसर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद परिवार सभी कृषक भाइयों-बहनों, कृषि वैज्ञानिकों, कृषि उद्यमियों, विद्यार्थियों तथा पाठकों को हार्दिक शुभकामनाएं देता है। आइए, हम अपनी समृद्ध परंपराओं से प्रेरणा लेते हुए विज्ञान, नवाचार और सामूहिक प्रयासों के बल पर ‘विकसित कृषि-विकसित भारत 2047’ के राष्ट्रीय संकल्प को साकार करें। यही हमारी सांस्कृतिक विरासत का सम्मान, विज्ञान का उद्देश्य और राष्ट्र निर्माण की सच्ची दिशा है।

(डा. मांगी लाल जाट)
सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक (भाकृअनुप)

भाकृअनुप
ICAR

खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका

वर्ष: 79, अंक: 4, अगस्त 2026

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. राजबीर सिंह** — **अध्यक्ष**
उपमहानिदेशक (कृषि विस्तार)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

2. **डा. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
परियोजना निदेशक (कृज्ञाप्रनि)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

3. **डा. विनोद कुमार सिंह** — **सदस्य**
निदेशक
भाकृअनुप-क्रीडा, हैदराबाद

4. **डा. धीर सिंह** — **सदस्य**
निदेशक
भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

5. **डा. के.के. सिंह** — **सदस्य**
कुलपति
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि विश्वविद्यालय
मोदीपुरम, मेरठ

6. **श्री हर्षवर्धन** — **सदस्य**
प्रधान जनसंपर्क अधिकारी, इफको, नई दिल्ली

7. **श्री रितु राज** — **सदस्य**
कृषि पत्रकार

8. **सुश्री नीलम त्यागी** — **सदस्य**
प्रगतिशील किसान

9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
संपादक, हिन्दी संपादकीय एकक (कृज्ञाप्रनि)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रधान संपादक
डा. अनुराधा अग्रवाल
संपादक
सुनीता अरोड़ा
संपादन सहयोग
गजेन्द्र

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: businessuniticar@gmail.com
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 50.00 वार्षिक : रु. 500.00
विशेषांक : रु. 200.00

E-mail : khetidipa@gmail.com

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों/कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय-सूची

निदेशक की कलम से
स्वतंत्र भारत की आधुनिक कृषि यात्रा-**अनुराधा अग्रवाल**

4 संभावनाएं
कृषि उद्यमिता से ग्रामीण भारत में आजीविका सुरक्षा
रवींद्र नाथ पडारिया, स्वीटी मुखर्जी, सिमरन पुंडीर, ऐश्वर्या एस. **और** प्रीति प्रियदर्शिनी

11 बेहतर
नई किस्म-पूसा जवाहर संकर मक्का-2
दिग्वेन्द्र पाल, गणपति मुक्रि, जयंत एस. भट, चंदू सिंह **और** रवींद्र एन. गडग

14 आधुनिक
भारत विस्तार-डिजिटल कृषि का नया आयाम
विशाल दाधीच, हरनारायण मीना, दिनेश, भीमसेन **और** जय प्रकाश मिश्र

17 पहल
सामुदायिक प्रयासों से मत्स्य संरक्षण
प्रणब गोगोई, दीपेन्द्र सिंह, थांगजम निरुपदा चानू **और** अजय साहा

20 अवसर
भेड़ और बकरियों के उत्पादों का मूल्यसंवर्धन
प्रेम पाल रोहिल्ला **और** बाबू लाल जांगिड़

22 तकनीक
टिकाऊ खेती हेतु प्रभावी स्थायी क्यारी रोपण
शांति देवी बम्बोरिया, दीप मोहन महला **और** सुमित्रा देवी बम्बोरिया

विषय-सूची

26 अनूठा

बहुउपयोगी वृक्ष है बुरांश

लोकेन्द्र सिंह, माम चन्द सिंह **और** पी.एस. ब्रह्मानंद

29 पोषण

खाद्यान्न फसलों में संतुलित उर्वरक प्रबंधन

ऋचा जसवाल **और** मीनाक्षी

31 कुछ अलग

समुद्री शैवाल की खेती से आय के नए स्रोत

अमित सोलंकी, मनोज कुमार सिंह, श्रुति जायसवाल, पवन कुमार वर्मा **और** आकांक्षा

34 लाभकारी

मधुमक्खियों के संरक्षण में उपयोगी – सूक्ष्म शैवाल

आनंद चौधरी

36 कृषि कैलेण्डर

अगस्त के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, अंजली पटेल, विनय उपाध्याय, कपिला शेखावत, प्रवीण कुमार उपाध्याय **और** आदित्य सिंह

महानिदेशक के डेस्क से

आवरण II

पर्व, परंपरा और कृषि विज्ञान: भारतीय ज्ञान से विकसित कृषि की ओर

भाकृअनुप 98वां स्थापना दिवस

आवरण III

विज्ञान आधारित कृषि विकास का नया संकल्प

निदेशक की कलम से

स्वतंत्र भारत की आधुनिक कृषि यात्रा

हमारा देश इस वर्ष अपना 80वां स्वतंत्रता दिवस मनाने जा रहा है। इन 80 वर्षों के गौरवशाली सफर में भारतीय कृषि नई ऊंचाइयों की ओर अग्रसर हो रही है, जहां स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत एक कृषि प्रधान देश था। देश की अधिकांश आबादी कृषि पर निर्भर थी और खेती पारंपरिक तरीकों, सीमित संसाधनों तथा कम उत्पादन के कारण अनेक चुनौतियों से घिरी हुई थी। साथ ही देश को खाद्यान्न की कमी का सामना भी करना पड़ता था। वहीं वर्ष 1947 से लेकर आज तक भारतीय कृषि ने अनेक चुनौतियों का सामना करते हुए उल्लेखनीय प्रगति की है। वैज्ञानिक अनुसंधान, उन्नत बीज, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार, कृषि मशीनीकरण, डिजिटल तकनीकों का उपयोग और किसानों के लिए विभिन्न सरकारी योजनाओं ने कृषि क्षेत्र को नई दिशा दी है।

1960 के दशक की हरित क्रांति ने भारतीय कृषि के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा। उच्च उत्पादकता वाली गेहूं और धान की किस्मों, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग और सिंचाई के विस्तार ने भारत को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया। इसके बाद श्वेत क्रांति ने दुग्ध उत्पादन में भारत को विश्व के अग्रणी देशों में शामिल किया। नीली क्रांति, पीली क्रांति और बागवानी मिशनों ने कृषि को बहुआयामी स्वरूप प्रदान किया।

हाल के वर्षों में कृषि केवल उत्पादन तक सीमित नहीं रही, बल्कि मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, जैविक खेती, प्राकृतिक खेती, ड्रोन तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमता (एआई), सटीक कृषि और डिजिटल कृषि जैसे नवाचारों ने किसानों के लिए नये अवसर खोले हैं। किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ), ई-नाम, कृषि स्टार्टअप और कृषि निर्यात को बढ़ावा देने वाली नीतियां किसानों की आय बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं।

सरकार द्वारा संचालित अनेक योजनाओं ने भी कृषि विकास को नई दिशा दी है। प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, मृदा स्वास्थ्य कार्ड, फसल बीमा योजना, किसान क्रेडिट कार्ड तथा ई-नाम जैसे प्रयास किसानों को आर्थिक सुरक्षा, बेहतर बाजार और आधुनिक कृषि अपनाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। किसान उत्पादक संगठन किसानों की सामूहिक शक्ति को बढ़ाकर उन्हें बेहतर मूल्य और विपणन सुविधाएं उपलब्ध करवा रहे हैं।

वहीं एक ओर देखें, तो समय के साथ कृषि का स्वरूप भी बदलता गया। अब किसानों का रुझान केवल पारंपरिक फसलों तक सीमित नहीं है। बागवानी, फल-सब्जी उत्पादन, मसाले, औषधीय एवं सुगंधित पौधों की खेती, फूलों की खेती, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, मत्स्य पालन, डेरी और कुक्कुट पालन जैसे विविध क्षेत्रों में नई संभावनाएं विकसित हुई हैं। इससे किसानों की आय के स्रोत बढ़े हैं और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई गति मिली है।

आज कृषि केवल खाद्यान्न उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि आधुनिक तकनीक, वैज्ञानिक अनुसंधान, मूल्य संवर्धन, कृषि उद्यमिता और डिजिटल नवाचार के साथ देश की अर्थव्यवस्था का एक मजबूत आधार बन चुकी है। यह परिवर्तन किसानों की मेहनत, वैज्ञानिकों के शोध और सरकारों की विभिन्न नीतियों का संयुक्त परिणाम है। भारत, खाद्यान्न आयात करने वाले देश से आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में स्थापित हुआ है।

वर्तमान में तकनीक भारतीय कृषि की सबसे बड़ी ताकत बनकर उभरी है। ड्रोन के माध्यम से फसलों की निगरानी और कीटनाशकों का छिड़काव, कृत्रिम बुद्धिमता आधारित रोगों एवं कीटों की पहचान, सेंसर आधारित सिंचाई प्रणाली, मोबाइल ऐप्स के माध्यम से मौसम की पूर्व जानकारी तथा डिजिटल कृषि प्लेटफार्म किसानों को अधिक सटीक निर्णय लेने में सहायता कर रहे हैं। इससे लागत कम करने और उत्पादन बढ़ाने में मदद मिल रही है।

आज आवश्यकता है कि प्राकृतिक खेती, जैविक खेती, सूक्ष्म सिंचाई, फसल विविधीकरण और कृषि वानिकी जैसे उपायों को व्यापक स्तर पर अपनाया जाए। साथ ही कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण, भंडारण, कोल्ड चेन और निर्यात को बढ़ावा देकर किसानों को अधिक लाभ दिलवाया जा सकता है। कृषि शिक्षा, कौशल विकास और ग्रामीण युवाओं को कृषि स्टार्टअप तथा एग्री बिजनेस से जोड़ना भी समय की मांग है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय कृषि की तस्वीर में आया परिवर्तन वास्तव में देश की विकास यात्रा का महत्वपूर्ण अध्याय है। जहां कभी खाद्यान्न की कमी सबसे बड़ी चुनौती थी, वहीं आज भारत विश्व के प्रमुख कृषि उत्पादक देशों में शामिल है। अब लक्ष्य केवल अधिक उत्पादन नहीं, बल्कि किसानों की समृद्धि, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और टिकाऊ कृषि व्यवस्था का निर्माण होना चाहिए।

अनुराधा

(अनुराधा अग्रवाल)

कृषि उद्यमिता से ग्रामीण भारत में आजीविका सुरक्षा

रवींद्र नाथ पडारिया[1], **स्वीटी मुखर्जी**[1], **सिमरन पुंडीर**[1], **ऐश्वर्या एस.**[2] और **प्रीति प्रियदर्शिनी**[3]

"ग्रामीण भारत आज तीव्र सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। एक समय था, जब कृषि को ग्रामीण परिवारों की आजीविका का प्रमुख आधार माना जाता था, किंतु वर्तमान परिस्थितियों में यह किसानों और उनके परिवारों की बढ़ती आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं रह गई है। भूमि पर बढ़ते जनसंख्या दबाव, कृषि उत्पादन की बढ़ती लागत, बाजार मूल्यों में निरंतर उतार-चढ़ाव तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने विशेष रूप से छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए पारंपरिक खेती की लाभप्रदता को कम कर दिया है। दूसरी ओर तकनीकी प्रगति, बेहतर संचार एवं संपर्क सुविधाएं, डिजिटल मंचों का विस्तार तथा बाजारों तक बढ़ती पहुंच ने ग्रामीण क्षेत्रों में आय अर्जित करने के नए अवसर उपलब्ध करवाए हैं। आज की ग्रामीण अर्थव्यवस्था केवल फसल उत्पादन तक सीमित नहीं है। बागवानी, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण, कृषि पर्यटन, नर्सरी प्रबंधन, कृषि यंत्र किराया सेवाएं तथा डिजिटल परामर्श सेवाएं ग्रामीण आय के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में उभर रही हैं। गुणवत्तापूर्ण खाद्य उत्पादों, प्रसंस्करित वस्तुओं तथा विशिष्ट कृषि सेवाओं की बढ़ती मांग ने नवाचार अपनाने और नए उद्यम स्थापित करने के इच्छुक व्यक्तियों के लिए अनेक संभावनाएं उत्पन्न की हैं। परिणामस्वरूप, आजीविका मात्र के लिए की जाने वाली कृषि से उद्यमोन्मुख कृषि एवं ग्रामीण उद्यमिता की ओर ध्यान निरंतर बढ़ रहा है।"

ग्रामीण क्षेत्रों में औपचारिक रोजगार के अवसरों की उपलब्धता, प्रतिवर्ष कार्यबल में शामिल होने वाले शिक्षित युवाओं की बढ़ती संख्या की तुलना में अभी भी सीमित है। केवल सरकारी अथवा निजी नौकरियों पर निर्भर रहना दीर्घकाल में न तो व्यावहारिक है और न ही टिकाऊ। ऐसे में स्वरोजगार तथा उद्यम विकास को आय सृजन और आर्थिक प्रगति के प्रभावी माध्यम के रूप में बढ़ावा देना आवश्यक हो जाता है।

उद्यमिता व्यक्तियों को अवसरों की प्रतीक्षा करने के बजाय स्वयं अवसरों का सृजन

[1]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली; [2]भाकृअनुप-केंद्रीय भैंस अनुसंधान संस्थान, हिसार; [3]बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर

करने की क्षमता प्रदान करती है। स्थानीय संसाधनों और बाजार की मांग के आधार पर छोटे-छोटे उद्यम स्थापित करके ग्रामीण युवा एवं किसान न केवल अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं, बल्कि अपने समुदाय के अन्य लोगों के लिए भी रोजगार के अवसर उत्पन्न कर सकते हैं। उद्यम आधारित विकास स्थानीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाता है, रोजगार सृजन को बढ़ावा देता है, मूल्य शृंखलाओं को मजबूत करता है तथा समावेशी विकास को प्रोत्साहित करता है। सफल ग्रामीण उद्यम नवाचार को बढ़ावा देने, संसाधनों के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करने तथा बाहरी आय स्रोतों पर निर्भरता कम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कृषि स्टार्टअप, किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ), स्वयं सहायता समूह तथा मूल्य संवर्धन आधारित उद्यमों की बढ़ती लोकप्रियता यह दर्शाती है कि आजीविका संबंधी चुनौतियों के समाधान में उद्यमिता की भूमिका निरंतर महत्वपूर्ण होती जा रही है। उपयुक्त नीतिगत समर्थन, प्रशिक्षण, वित्तीय सेवाओं तथा प्रभावी बाजार संपर्क के माध्यम से उद्यमिता ग्रामीण समृद्धि और सतत विकास की एक सशक्त आधारशिला बन सकती है।

सफल उद्यम-सोच, नेतृत्व और अवसरों का समन्वय

सारणी: आय विविधीकरण एवं ग्रामीण विकास के लिए संभावित उद्यम अवसर

क्षेत्र	उद्यम अवसर	प्रमुख लाभ
कृषि	बीज उत्पादन	अधिक आय, गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता तथा बाजार में निरंतर मांग
बागवानी	नर्सरी प्रबंधन	नियमित आय तथा गुणवत्तापूर्ण पौध सामग्री की बढ़ती मांग
पशुपालन	डेरी उद्यम	दैनिक नकद आय, रोजगार सृजन एवं पोषण सुरक्षा
मधुमक्खी पालन	शहद उत्पादन	अतिरिक्त आय, कम भूमि की आवश्यकता तथा फसलों में बेहतर परागण
मशरूम उत्पादन	मशरूम खेती	सीमित स्थान में उत्पादन, शीघ्र आय तथा वर्षभर उत्पादन की संभावना
खाद्य प्रसंस्करण	अचार, जैम, जूस एवं निर्जलित उत्पाद	मूल्य संवर्धन, कटाई उपरांत हानि में कमी तथा बेहतर बाजार मूल्य
मत्स्य पालन	मछली उत्पादन	उच्च उत्पादकता एवं बढ़ती उपभोक्ता मांग
पुष्पोत्पादन	कर्तित पुष्प एवं सजावटी पौधों का उत्पादन	उच्च मूल्य वाला उद्यम तथा शहरी बाजारों में अच्छी संभावनाएं
कृषि सेवाएं	कस्टम हायरिंग सेंटर	कृषि यंत्रों के किराये से आय तथा कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा
कृषि पर्यटन	फार्म पर्यटन एवं मनोरंजन गतिविधियां	आय के विविध स्रोत तथा ग्रामीण रोजगार सृजन
डिजिटल कृषि	कृषि परामर्श एवं आईसीटी आधारित सेवाएं	प्रौद्योगिकी आधारित उद्यमिता एवं विस्तृत बाजार अवसर
जैविक खेती	जैविक उत्पादों का उत्पादन एवं विपणन	प्रीमियम मूल्य तथा स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों की बढ़ती मांग
सामूहिक उद्यम	एफपीओ आधारित आदान आपूर्ति, संग्रहण एवं विपणन	पैमाने की अर्थव्यवस्था, बेहतर सौदेबाजी क्षमता तथा बाजार तक बेहतर पहुंच

आजीविका रणनीति के रूप में उद्यमिता

उद्यमिता से आशय अवसरों की पहचान करने, उपलब्ध संसाधनों को संगठित करने, सोच-समझकर जोखिम उठाने तथा नवाचार के माध्यम से मूल्य सृजित करने की क्षमता से है। ग्रामीण विकास के संदर्भ में उद्यमिता को आज एक प्रभावी आजीविका रणनीति के रूप में देखा जा रहा है, जो आय में वृद्धि, जोखिमों में कमी तथा जीवन स्तर में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

पारंपरिक आजीविका गतिविधियां प्रायः आय के एक ही स्रोत पर निर्भर होती हैं, जबकि उद्यमिता विविधीकरण और नवाचार को प्रोत्साहित करती है। उदाहरण के लिए, कोई किसान दूध का प्रसंस्करण कर मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार करता है, उच्च मूल्य वाली फसलों की खेती करता है, नर्सरी स्थापित करता है, मधुमक्खी पालन शुरू करता है अथवा एकीकृत कृषि प्रणाली के अंतर्गत विभिन्न कृषि उद्यमों को जोड़कर कार्य करता है, तो वह मूलतः आजीविका अर्जन के लिए उद्यमशील दृष्टिकोण अपना रहा होता है।

उद्यमिता व्यक्तियों को रोजगार खोजने वाले के बजाय रोजगार सृजित करने वाला

सरकारी प्रयासों से आत्मनिर्भरता की ओर

बनाती है। यह उन्हें बदलती बाजार परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को ढालने, उभरते अवसरों का लाभ उठाने तथा आर्थिक एवं पर्यावरणीय चुनौतियों का प्रभावी ढंग से सामना करने में सक्षम बनाती है। इसके अतिरिक्त, उद्यम आधारित गतिविधियां परिवार के अन्य सदस्यों और स्थानीय समुदाय के लोगों के लिए भी रोजगार के अवसर उत्पन्न करती हैं, जिससे व्यापक ग्रामीण विकास को बढ़ावा मिलता है।

सतत एवं समावेशी विकास की दिशा में अग्रसर ग्रामीण भारत के लिए उद्यमिता आजीविका में सुधार, स्थानीय अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने तथा नवाचार, पहल और उद्यमशीलता पर आधारित समृद्ध भविष्य के निर्माण का एक सशक्त माध्यम है।

सफलता गाथा-1
समेकित जैविक खेती से समृद्धि की ओर

दिल्ली के कुल्लकपुर गांव के श्री अभिषेक धामा ने पारंपरिक खेती को नवाचार आधारित, लाभकारी और टिकाऊ कृषि उद्यम में बदलकर एक प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत किया है। लगभग 16 हैक्टर भूमि पर उन्होंने ऊर्ध्वाधर (वर्टिकल) एवं बहुस्तरीय खेती, डेरी, औषधीय एवं सुगंधित फसलों तथा जैव उर्वरक एवं जैव कीटनाशकों के स्वउत्पादन पर आधारित समेकित जैविक खेती मॉडल विकसित किया है। इनके बायो गैस संयंत्र से प्राप्त स्लरी खेतों की उर्वरता बढ़ाने के साथ रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता भी कम करती है। अधिक आय प्राप्त करने के लिए इन्होंने स्टीविया, जेरेनियम, वेटीवर, कैमोमाइल और मोरिंगा जैसी उच्च मूल्य वाली फसलों को अपनाया तथा पूसा सनफ्रिज जैसी आधुनिक तकनीक का उपयोग कर फसलों की गुणवत्ता बनाए रखी। अधिरायांश ऑर्गेनिक्स प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड के माध्यम से वे सैकड़ों किसानों को जैविक बाजारों से जोड़ते हुए सामूहिक विपणन और मूल्य संवर्धन को बढ़ावा दे रहे हैं। इनकी नवाचारी कृषि प्रणाली के लिए उन्हें आईएआरआई इनोवेटिव फार्मर अवार्ड सहित कई प्रतिष्ठित सम्मान प्राप्त हुए हैं। इनकी सफलता यह दर्शाती है कि नवाचार, टिकाऊ खेती और उद्यमिता के माध्यम से कृषि को लाभकारी आजीविका का सशक्त माध्यम बनाया जा सकता है

चुनौतियां

आजीविका में वे सभी क्षमताएं, संसाधन, परिसंपत्तियां तथा गतिविधियां शामिल होती हैं जिनके माध्यम से व्यक्ति अपनी आय अर्जित करता है और अपने जीवन-निर्वाह एवं कल्याण को सुनिश्चित करता है। भारत के करोड़ों ग्रामीण परिवारों की आजीविका कृषि तथा उससे संबंधित गतिविधियों पर आधारित है। फिर भी सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय तथा संस्थागत कारणों के चलते स्थिर और टिकाऊ आजीविका सुनिश्चित करना आज भी एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। इन चुनौतियों को समझना ऐसी प्रभावी रणनीतियों के निर्माण के लिए आवश्यक है, जो आय सुरक्षा बढ़ाने और लोगों की अनुकूलन क्षमता को सुदृढ़ करने में सहायक हों।

कृषि भूमि का विखंडन

भारतीय कृषि के समक्ष प्रमुख चुनौतियों में से एक कृषि भूमि का निरंतर विखंडन और उसका छोटा आकार है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी पारिवारिक बंटवारे के कारण कृषि भूमि छोटे-छोटे हिस्सों में विभाजित होती गई है, जिसके परिणामस्वरूप अधिकांश किसानों के खेत आकार में छोटे और बिखरे हुए हो गए हैं। ऐसी स्थिति में कृषि को आर्थिक रूप से लाभकारी बनाना कठिन हो जाता है।

छोटे किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाने, यंत्रीकरण में निवेश करने, उत्पादन लागत को कम करने तथा बाजार तक प्रभावी पहुंच स्थापित करने में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके साथ ही, सीमित भूमि उपलब्धता, उत्पादन क्षमता और आय अर्जन की संभावनाओं को भी प्रभावित करती है, जिससे केवल फसल उत्पादन के आधार पर परिवार की बढ़ती आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप, अनेक किसान परिवार पशुपालन, बागवानी, कृषि प्रसंस्करण तथा अन्य उद्यमशील गतिविधियों को अतिरिक्त आय के स्रोत के रूप में अपनाने लगे हैं, ताकि उनकी आय में वृद्धि हो सके और आजीविका अधिक सुरक्षित एवं स्थिर बन सके।

जलवायु संबंधी अनिश्चितताएं

कृषि आज भी प्राकृतिक संसाधनों और मौसम की परिस्थितियों पर काफी हद तक निर्भर है। अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़, अत्यधिक तापमान तथा असामयिक

मौसम जैसी घटनाओं में वृद्धि ने ग्रामीण आजीविका को अधिक संवेदनशील बना दिया है। फसलों की क्षति, उत्पादकता में कमी, कीट एवं रोगों का प्रकोप तथा प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण किसानों को आर्थिक हानि पहुंचाते हैं।

जलवायु परिवर्तन से जुड़े जोखिमों का प्रभाव विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों पर अधिक पड़ता है। इनके पास वित्तीय संसाधन और वैकल्पिक व्यवस्थाएं सीमित होती हैं। ऐसी परिस्थितियों में आय के विविध स्रोत विकसित करना तथा किसी एक गतिविधि पर निर्भरता कम करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

बाजार के उतार-चढ़ाव

अच्छा उत्पादन होने के बावजूद किसानों को हमेशा उचित लाभ प्राप्त हो, यह आवश्यक नहीं है। कृषि बाजारों में कीमतों का उतार-चढ़ाव, मौसमी अधिक उत्पादन, भंडारण सुविधाओं की कमी तथा बिचौलियों की प्रमुख भूमिका जैसी समस्याएं अक्सर देखने को मिलती हैं। नकदी की तत्काल आवश्यकता या भंडारण के अभाव में किसानों को कई बार अपनी उपज कम कीमत पर बेचनी पड़ती है।

स्वयं सहायता समूह से ग्रामीण समृद्धि

इसके अतिरिक्त, सीमित सौदेबाजी क्षमता और बाजार संबंधी जानकारी की कमी भी किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त करने से वंचित कर देती है। ऐसी परिस्थितियां मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, ब्रांडिंग, प्रत्यक्ष विपणन तथा किसान समूहों एवं उत्पादक संगठनों के माध्यम से सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं।

रोजगार के सीमित अवसर

ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषकर शिक्षित युवाओं की संख्या लगातार बढ़ रही है, लेकिन रोजगार के अवसर उसी अनुपात में नहीं बढ़ पाए हैं। कृषि क्षेत्र अकेले बढ़ती श्रमशक्ति को समाहित करने में सक्षम नहीं है, जबकि विनिर्माण और सेवा क्षेत्रों में भी पर्याप्त अवसर उपलब्ध नहीं हैं।

फलस्वरूप, अनेक ग्रामीण युवा बेरोजगारी का सामना करते हैं या कम आय वाले तथा अस्थायी कार्यों को अपनाने के लिए विवश हो जाते हैं। रोजगार के अवसरों और उपलब्ध मानव संसाधन के बीच यह असंतुलन आर्थिक असुरक्षा और निराशा को जन्म देता है। उद्यमिता को बढ़ावा देकर ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक रोजगार के नए अवसर सृजित किए जा सकते हैं।

पलायन और अल्प रोजगार

पर्याप्त आजीविका अवसरों के अभाव में अनेक ग्रामीण लोग रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं। यद्यपि इससे अस्थायी आय प्राप्त हो सकती है, लेकिन अक्सर उन्हें असुरक्षित रोजगार, कठिन जीवन परिस्थितियों और सामाजिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। मौसमी पलायन परिवारिक जीवन और कृषि कार्यों को भी प्रभावित कर सकता है।

जो लोग ग्रामीण क्षेत्रों में ही रहते हैं, उनमें से अनेक अल्परोजगार की स्थिति का सामना करते हैं, जहां उनकी क्षमता, समय और कौशल का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता। उद्यमिता इस समस्या का एक प्रभावी विकल्प प्रस्तुत

सफलता गाथा-2

मूल्य संवर्धन के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाना

हरियाणा के गुरुग्राम जिले के चंदू गांव की श्रीमती पूजा शर्मा ने एक छोटे से स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) को सफल महिला-नेतृत्व वाले खाद्य प्रसंस्करण उद्यम में बदल दिया। क्षितिज स्वयं सहायता समूह की अध्यक्ष के रूप में इन्होंने वर्ष 2018 में 'जिंग-एन-जेस्ट' नामक उद्यम की स्थापना की, जहां कृषि विज्ञान केंद्र (आईएआरआई), गुरुग्राम से प्राप्त प्रशिक्षण के आधार पर सोमनट, श्री अन्न आधारित कुकीज तथा अन्य पौष्टिक खाद्य उत्पाद तैयार किए जाते हैं। बाजरा, अलसी और प्राकृतिक मिठास जैसे स्वास्थ्यवर्धक अवयवों के उपयोग तथा प्रभावी विपणन रणनीति के कारण इनके उत्पाद दिल्ली-एनसीआर के प्रमुख रिटेल स्टोर्स, आतिथ्य प्रतिष्ठानों और सरकारी संस्थानों तक पहुंच चुके हैं। व्यावसायिक सफलता के साथ-साथ श्रीमती शर्मा ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण की भी प्रेरणा स्रोत बनी हैं। इन्होंने लगभग 150 महिलाओं को जोड़ते हुए 9 स्वयं सहायता समूहों का गठन किया तथा 1,000 से अधिक महिलाओं को प्रशिक्षण देकर उनमें से अनेक को खाद्य प्रसंस्करण आधारित उद्यम स्थापित करने के लिए प्रेरित किया। इनकी सफलता यह दर्शाती है कि मूल्य संवर्धन, सामूहिक प्रयास, कौशल विकास और प्रभावी विपणन के माध्यम से महिलाओं के लिए टिकाऊ आजीविका, बेहतर पोषण और आर्थिक सशक्तिकरण सुनिश्चित किया जा सकता है।

करती है। यह लोगों को अपने ही समुदाय में सार्थक आर्थिक अवसर सृजित करने में सक्षम बनाती है।

विविध उद्यमों, स्थानीय स्तर पर मूल्य संवर्धन तथा बाजारोन्मुख उत्पादन प्रणालियों को बढ़ावा देकर उद्यमिता मजबूरी में होने वाले पलायन को कम कर सकती है और अधिक स्थिर तथा टिकाऊ आजीविका सुनिश्चित करने में योगदान दे सकती है।

आजीविका सुरक्षा के लिए उद्यमिता

आय के स्रोतों में विविधता

उद्यमिता ग्रामीण परिवारों को केवल फसल उत्पादन पर निर्भर रहने के बजाय आय के अनेक स्रोत विकसित करने का अवसर प्रदान करती है। दुग्ध उत्पादन, मधुमक्खी पालन, नर्सरी प्रबंधन, खाद्य प्रसंस्करण तथा कृषि पर्यटन जैसी गतिविधियां अतिरिक्त आय के स्रोत उपलब्ध करवाती हैं और आजीविका को अधिक सुरक्षित एवं स्थिर बनाती हैं।

रोजगार सृजन

उद्यम आधारित गतिविधियां परिवार के सदस्यों तथा स्थानीय समुदाय के लोगों के लिए रोजगार के अवसर उत्पन्न करती हैं। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों से जुड़े लघु उद्यम ग्रामीण श्रमशक्ति को उत्पादक कार्यों में संलग्न करने, बेरोजगारी को कम करने तथा स्थानीय आर्थिक विकास को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जोखिमों में कमी

किसी एक ही गतिविधि या आय स्रोत पर अत्यधिक निर्भरता परिवारों को उत्पादन तथा बाजार संबंधी जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशील बना देती है। उद्यमिता कृषि एवं गैर-कृषि गतिविधियों के विविधीकरण को प्रोत्साहित करती है, जिससे फसल हानि, कीमतों में उतार-चढ़ाव तथा जलवायु संबंधी अनिश्चितताओं के प्रभाव को कम किया जा सकता है। इस प्रकार यह आजीविका को अधिक सुरक्षित और लचीला बनाती है।

महिला कृषकों का उद्यमिता में बढ़ रहा नेतृत्व

मूल्य संवर्धन एवं बाजार से बेहतर जुड़ाव

उद्यमी प्रसंस्करण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग तथा प्रत्यक्ष विपणन के माध्यम से कृषि उत्पादों के मूल्य में वृद्धि करते हैं। इससे किसानों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त होता है, कटाई के बाद होने वाली हानियों में कमी आती है तथा उपभोक्ताओं और बाजारों के साथ उनका जुड़ाव मजबूत होता है। परिणामस्वरूप आय बढ़ाने और बाजार में प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति मजबूत करने में सहायता मिलती है।

महिलाओं और युवाओं का सशक्तिकरण

उद्यमिता महिलाओं और युवाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने तथा निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदारी करने का अवसर प्रदान करती है। यह उनके ज्ञान, कौशल, आत्मविश्वास और नेतृत्व क्षमता का विकास करती है, जिससे वे परिवार और समाज के विकास में अधिक प्रभावी भूमिका निभा पाते हैं। साथ ही, उद्यमिता उन्हें नए अवसरों का लाभ उठाने, अपनी क्षमताओं का बेहतर उपयोग करने तथा सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति में सार्थक योगदान देने के लिए प्रेरित करती है।

सामूहिक उद्यमिता की भूमिका

यद्यपि व्यक्तिगत उद्यमिता का अपना महत्व है, किंतु सामूहिक उद्यमिता के माध्यम से अधिक व्यापक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं तथा आर्थिक अवसरों का विस्तार किया जा सकता है। किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ), सहकारी समितियां, स्वयं सहायता समूह तथा किसान समूह छोटे उत्पादकों को संगठित होकर कार्य करने और उन चुनौतियों का समाधान करने में सहायता करते हैं, जिनका सामना व्यक्तिगत स्तर पर करना कठिन होता है।

संसाधनों के सामूहिक उपयोग से किसान कम लागत पर कृषि आदान प्राप्त कर सकते हैं, आधुनिक तकनीकों तक पहुंच बना सकते हैं, सामूहिक विपणन कर सकते हैं तथा अपनी उपज के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त करने हेतु प्रभावी ढंग से सौदेबाजी कर सकते

सफलता गाथा-3

मशरूम उद्यमिता के माध्यम से महिला सशक्तिकरण

बिहार के नालंदा जिले की श्रीमती अनीता कुमारी, जिन्हें 'बिहार की मशरूम लेडी' के नाम से जाना जाता है, ने मशरूम उत्पादन को एक सफल आजीविका उद्यम में बदलते हुए सैकड़ों ग्रामीण महिलाओं के लिए प्रेरणा का स्रोत बनाया है। गृह विज्ञान में स्नातक तथा माधोपुर फार्मर्स प्रोड्यूसर कंपनी लिमिटेड (एफपीओ) की निदेशक के रूप में इन्होंने मशरूम स्पॉन उत्पादन, खेती, प्रसंस्करण और विपणन पर आधारित कम लागत वाली समेकित प्रणाली विकसित की। कम लागत वाले मशरूम उत्पादन कक्ष और स्थानीय संसाधनों की सहायता से इन्होंने वर्षभर ऑयस्टर एवं मिल्की मशरूम का उत्पादन संभव बनाया। आय बढ़ाने के लिए इन्होंने मशरूम पाउडर और अचार जैसे मूल्य संवर्धित उत्पाद विकसित किए तथा एफपीओ के माध्यम से सामूहिक विपणन और प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा अनेक महिलाओं और छोटे किसानों को मशरूम उद्यम अपनाने के लिए प्रेरित किया। इनका मॉडल कृषि अवशेषों को आय के स्रोत में बदलने, पर्यावरण अनुकूल खेती को बढ़ावा देने तथा कम भूमि और कम निवेश में रोजगार सृजित करने का उत्कृष्ट उदाहरण है। आईएआरआई इनोवेटिव फार्मर अवार्ड सहित अनेक राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित श्रीमती अनीता कुमारी की सफलता यह सिद्ध करती है कि नवाचार, कौशल विकास और सामूहिक प्रयासों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं की आजीविका और आत्मनिर्भरता को सशक्त बनाया जा सकता है।

हैं। सामूहिक उद्यमों के माध्यम से पैमाने की अर्थव्यवस्था का लाभ मिलता है, लेन-देन की लागत कम होती है तथा बाजार में किसानों की सौदेबाजी क्षमता मजबूत होती है।

इसके अतिरिक्त, सामूहिक संस्थाएं किसानों को ऋण सुविधाओं, सरकारी योजनाओं, तकनीकी परामर्श सेवाओं तथा नए बाजार अवसरों तक पहुंच बनाने में सहायता करती हैं। देश के विभिन्न भागों के अनुभव यह दर्शाते हैं कि संगठित किसान समूह, व्यक्तिगत किसानों की तुलना में मूल्य शृंखलाओं से बेहतर ढंग से जुड़ पाते हैं तथा अधिक टिकाऊ और सफल उद्यम स्थापित करने में सक्षम होते हैं।

कृषि उद्यमियों के लिए भविष्य के आवश्यक कौशल

कृषि और व्यवसाय के क्षेत्र में तेजी से हो रहे परिवर्तनों के कारण ग्रामीण उद्यमियों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वे निरंतर अपने ज्ञान और क्षमताओं का विकास करते रहें, ताकि वे प्रतिस्पर्धी और सक्षम बने रह सकें। उत्पादन संबंधी तकनीकी ज्ञान के साथ-साथ भविष्य के उद्यमियों को अपने उद्यमों के प्रभावी संचालन और विस्तार के लिए विविध प्रकार के कौशलों की आवश्यकता होगी।

आज के समय में डिजिटल साक्षरता का महत्व लगातार बढ़ रहा है। सूचना प्राप्त करने, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का उपयोग करने, डिजिटल भुगतान प्रणालियों को अपनाने तथा सोशल मीडिया और ई-कॉमर्स के माध्यम से ग्राहकों से जुड़ने के लिए डिजिटल कौशल आवश्यक हो गए हैं। इसी प्रकार, वित्तीय प्रबंधन कौशल उद्यमियों को लेखा-जोखा रखने, नकदी प्रवाह का प्रबंधन करने, लाभ-हानि का आकलन करने तथा निवेश संबंधी बेहतर निर्णय लेने में सहायता प्रदान करते हैं।

समेकित कृषि प्रणाली से लाभान्वित होती खेती

प्रभावी ब्रांडिंग और आकर्षक पैकेजिंग किसी उत्पाद की पहचान बनाने, उसकी बाजार में स्वीकार्यता बढ़ाने तथा उपभोक्ताओं को आकर्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ऑनलाइन विपणन और डिजिटल बाजारों के विस्तार के साथ ई-कॉमर्स संबंधी कौशल भी व्यापक ग्राहक वर्ग तक पहुंच बनाने और बाजार अवसरों का लाभ उठाने के लिए आवश्यक होते जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त, आंकड़ों और बाजार संबंधी सूचनाओं का उपयोग कर निर्णय लेने की क्षमता उद्यमियों को बदलती प्रवृत्तियों को समझने, उत्पादन को बेहतर बनाने तथा उपभोक्ताओं की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य करने में सहायता करती है।

वर्तमान समय में जलवायु जोखिम प्रबंधन कौशल भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनके माध्यम से उद्यमी मौसम की अनिश्चितताओं, संसाधनों की सीमाओं तथा पर्यावरणीय चुनौतियों का बेहतर ढंग से सामना कर सकते हैं। साथ ही, नेतृत्व क्षमता, प्रभावी संचार कौशल और नेटवर्किंग की योग्यता भी उतनी ही आवश्यक है। ये विभिन्न हितधारकों के साथ सहयोग बढ़ाने, संस्थागत सहायता प्राप्त करने तथा मूल्य शृंखलाओं में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने में मदद करती हैं।

सफल आजीविका उद्यमिता के लिए रणनीतियां

किसी भी उद्यम की सफलता सुविचारित योजना, सही निर्णयों तथा निरंतर सीखने की प्रक्रिया पर निर्भर करती है। सफल आजीविका उद्यमिता के लिए निम्न रणनीतियां विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं:

- स्थानीय संसाधनों, उपलब्ध कौशल तथा बाजार की मांग के अनुरूप उद्यम का चयन करना।
- निवेश से पूर्व बाजार का समुचित अध्ययन और मूल्यांकन करना।
- प्रशिक्षण, अध्ययन भ्रमण तथा विशेषज्ञ परामर्श के माध्यम से तकनीकी ज्ञान प्राप्त करना।
- विपणन और ग्राहकों से जुड़ाव बढ़ाने के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म तथा सोशल मीडिया का उपयोग करना।
- मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, पैकेजिंग और ब्रांडिंग पर विशेष ध्यान देना।
- जोखिम कम करने और आय को स्थिर बनाए रखने के लिए विभिन्न उद्यमों को अपनाना।
- किसानों, संस्थानों, वित्तीय एजेंसियों तथा खरीदारों के साथ मजबूत नेटवर्क विकसित करना।
- नवाचार को अपनाना तथा बदलती बाजार और पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढालना।

ये रणनीतियां उद्यम की सफलता की संभावनाओं को बढ़ाने के साथ-साथ उसकी दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने में भी सहायक होती हैं।

इन भविष्य उन्मुख कौशलों का विकास ऐसे नवाचारी, सुदृढ़ और टिकाऊ उद्यमों के निर्माण के लिए आवश्यक है, जो बदलते आर्थिक परिवेश में सफलतापूर्वक आगे बढ़ सकें।

सरकारी पहलें

ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता और आजीविका विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा अनेक योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। ये पहलें वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन तथा बाजार से जुड़ाव के माध्यम से उद्यमियों को सशक्त बनाने का कार्य करती हैं:

- **प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण उद्यम औपचारिकीकरण योजना:** यह योजना सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों को वित्तीय सहायता, क्षमता विकास तथा विपणन सहयोग प्रदान करती है।
- **प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम:** ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में सूक्ष्म उद्यमों की स्थापना के लिए ऋण आधारित अनुदान (सब्सिडी) उपलब्ध करवाता है।
- **स्टार्टअप इंडिया:** नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए नीतिगत सहायता, इन्क्यूबेशन सुविधाएं तथा वित्तपोषण के अवसर प्रदान करता है।

अवसर

- डिजिटल कृषि सेवाएं तथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी आधारित परामर्श सेवाएं।
- कृषि यंत्रों को किराये पर उपलब्ध करवाने वाले कस्टम हायरिंग सेंटर।
- मधुमक्खी पालन एवं शहद आधारित उद्यम।
- सीमित भूमि एवं संसाधनों में आय अर्जित करने हेतु मशरूम उत्पादन।
- बीज उत्पादन एवं नर्सरी प्रबंधन आधारित उद्यम।
- खाद्य प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धित कृषि उत्पादों का उत्पादन।
- कृषि पर्यटन (एग्री-टूरिज्म) आधारित उद्यम, जो उपभोक्ताओं को कृषि और ग्रामीण जीवन का अनुभव प्रदान करते हैं।
- स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं की बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुए जैविक एवं प्राकृतिक कृषि उत्पादों का उत्पादन और विपणन।

डिजिटल परामर्श से आधुनिक बनते कृषक

- **स्टैंड-अप इंडिया:** महिला उद्यमियों तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के उद्यमियों को बैंक ऋण उपलब्ध करवाने में सहायता करता है।
- **प्रधानमंत्री मुद्रा योजना:** लघु उद्यमियों और सूक्ष्म उद्यमों को बिना किसी जमानत के ऋण उपलब्ध करवाती है।
- **राष्ट्रीय पशुधन मिशन:** वित्तीय एवं तकनीकी सहायता के माध्यम से पशुधन आधारित उद्यमों को प्रोत्साहित करता है।
- **बागवानी के एकीकृत विकास हेतु मिशन:** बागवानी विकास, नर्सरी स्थापना, संरक्षित खेती तथा कटाई उपरांत प्रबंधन को समर्थन प्रदान करता है।
- **10,000 किसान उत्पादक संगठन गठन एवं संवर्धन योजना:** किसानों के सामूहिक संगठनों को सुदृढ़ बनाकर बाजार तक पहुंच, मूल्य संवर्धन तथा आय वृद्धि को बढ़ावा देती है।
- **दीनदयाल अंत्योदय योजना-राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन:** स्वयं सहायता समूहों, महिला-नेतृत्व वाले उद्यमों तथा आजीविका के विविधीकरण को प्रोत्साहित करता है।
- **एग्री-क्लीनिक एवं एग्री-बिजनेस सेंटर:** कृषि स्नातकों और कृषि पेशेवरों को कृषि आधारित उद्यम तथा परामर्श सेवाएं स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

ग्रामीण युवाओं और महिलाओं के लिए उभरते अवसर

तकनीकी प्रगति और उपभोक्ताओं की बदलती पसंद ने ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता के अनेक नए अवसरों को जन्म दिया है। ये अवसर न केवल आय में वृद्धि की संभावनाएं प्रदान करते हैं, बल्कि स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन और आर्थिक विकास को भी बढ़ावा देते हैं।

ये अवसर ग्रामीण युवाओं और महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने, उद्यम स्थापित करने तथा स्थानीय स्तर पर आर्थिक विकास में सक्रिय योगदान देने के लिए व्यापक संभावनाएं प्रदान करते हैं।

भावी दिशा

उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए ऐसे अनुकूल वातावरण की आवश्यकता है जो नवाचार और उद्यम विकास को प्रोत्साहित कर सके। इसके लिए क्षमता विकास कार्यक्रमों के माध्यम से भावी उद्यमियों को तकनीकी, प्रबंधकीय तथा विपणन संबंधी कौशलों से सुसज्जित करना आवश्यक है। साथ ही, उद्यमों की स्थापना और विस्तार के लिए सुलभ ऋण तथा अन्य वित्तीय सेवाओं तक आसान पहुंच सुनिश्चित की जानी चाहिए।

डिजिटल प्रौद्योगिकियों, आधुनिक उत्पादन पद्धतियों तथा बाजार सूचना प्रणालियों को अपनाकर उद्यमों की प्रतिस्पर्धात्मकता और कार्यकुशलता में वृद्धि की जा सकती है। इसके साथ ही, किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ), सहकारी समितियों तथा स्वयं सहायता समूहों जैसी सामूहिक संस्थाओं को सुदृढ़ बनाना भी आवश्यक है, ताकि किसानों और उद्यमियों की बाजार, वित्तीय संसाधनों तथा तकनीकी सेवाओं तक बेहतर पहुंच सुनिश्चित हो सके।

ग्रामीण क्षेत्रों में सशक्त उद्यमिता पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण के लिए सरकारी संस्थानों, अनुसंधान संगठनों, वित्तीय संस्थाओं, निजी क्षेत्र तथा सामुदायिक संगठनों के बीच समन्वित और सहयोगात्मक प्रयास अत्यंत महत्वपूर्ण होंगे। ऐसे सामूहिक प्रयास ग्रामीण उद्यमिता को नई दिशा देने के साथ-साथ समावेशी और सतत विकास को भी गति प्रदान करेंगे।

नई किस्म-पूसा जवाहर संकर मक्का-2

दिग्वेन्द्र पाल[1], गणपति मुक्रि[1], जयंत एस. भट[2], चंदू सिंह[1] और रवींद्र एन. गडग[1]

"पूसा जवाहर संकर मक्का-2 (पीजेएचएम-2) भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली तथा जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश) द्वारा संयुक्त रूप से विकसित एक उन्नत संकर मक्का है। मक्का, भारत की प्रमुख खाद्यान्न, चारा एवं औद्योगिक फसलों में से एक है। बढ़ती जनसंख्या तथा इसकी बढ़ती मांग को देखते हुए उच्च उत्पादक संकरों का विकास आवश्यक है। इसी उद्देश्य से विकसित पीजेएचएम-2 को राज्य किस्म विमोचन समिति, मध्य प्रदेश द्वारा पहचानने के उपरांत भारत सरकार, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा अधिसूचना संख्या G- No- 4054, S-O- 4222(E), दिनांक 25 सितम्बर 2023 के माध्यम से अधिसूचित किया गया। यह संकर किस्म मुख्यत: मध्य भारत की उपोष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए उपयुक्त है तथा खरीफ मौसम में उच्च उत्पादन क्षमता प्रदर्शित करती है। इसकी औसत उपज लगभग 8200 कि.ग्रा./हैक्टर तथा अधिकतम उपज क्षमता लगभग 10,294 कि.ग्रा./हैक्टर तक दर्ज की गई है। संतुलित उर्वरक प्रबंधन, समय पर सिंचाई एवं प्रभावी खरपतवार नियंत्रण अपनाने पर इसकी उत्पादकता में और वृद्धि की जा सकती है। यह पुष्पण तना सड़न तथा डाउनी मिल्ड्यू जैसे प्रमुख रोगों के प्रति सहनशील है तथा दाना एवं चारा दोनों उद्देश्यों के लिए उपयुक्त है। इस प्रकार, पीजेएचएम-2 मध्य भारत में खरीफ मौसम के लिए अधिक उत्पादन एवं किसानों की आय बढ़ाने वाला एक विश्वसनीय संकर विकल्प है।"

भारत में मक्का तीसरी सबसे महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है, जिसका उपयोग मानव आहार, पशु चारा, स्टार्च, तेल, बायो-एथेनॉल तथा विभिन्न औद्योगिक उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। बढ़ती जनसंख्या तथा उद्योगों की बढ़ती मांग को देखते हुए मक्का उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि आवश्यक हो गई है।

इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पूसा जवाहर संकर मक्का-2 (पीजेएचएम-2) का विकास किया गया। यह संकर किस्म खरीफ मौसम में उच्च उपज देने के साथ-साथ प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बेहतर प्रदर्शन करती है।

जलवायु एवं मृदा

पीजेएचएम-2 संकर मुख्यत: मध्य भारत की उपोष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए उपयुक्त है तथा खरीफ मौसम में इसकी सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। इसकी अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 25-32 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा पर्याप्त वर्षा अनुकूल मानी जाती है। इसकी खेती अच्छी जल निकास वाली बलुई दोमट अथवा

[1]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; [2]भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान-क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, धारवाड़-580005 (कर्नाटक)

विशेषताएं

- मध्यम अवधि का संकर (90–95 दिनों में तैयार)
- पौधों की औसत ऊंचाई लगभग 195 सें.मी.
- गहरे हरे रंग की अर्धसीधी पत्तियां
- भुट्टों में उत्कृष्ट दाना भराव
- मोटे, अंबर-नारंगी रंग के दाने
- पुष्पण तना सड़न एवं डाउनी मिल्ड्यू के प्रति सहनशील
- अल्पकालीन सूखा एवं अस्थायी जलभराव सहन करने की क्षमता
- औसत उपज लगभग 8200 कि.ग्रा./हैक्टर
- अधिकतम उपज क्षमता लगभग 10,294 कि.ग्रा./हैक्टर
- दाना एवं चारा, दोनों उद्देश्यों के लिए उपयुक्त
- खरीफ मौसम में मध्य भारत की उपोष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए विशेष रूप से उपयुक्त
- उच्च उत्पादन क्षमता के साथ आय बढ़ाने में सहायक

पीजेएचएम-2 के उत्कृष्ट दाना भराव करते भुट्टे

जलोढ़ मृदा में सर्वोत्तम रहती है। मृदा का पी-एच 5.5-8.0 होना चाहिए तथा उसमें पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ उपलब्ध हों। खेत में जलभराव नहीं होना चाहिए। भूमि की गहरी जुताई कर मृदा को भुरभुरी बनाना तथा उचित जल निकास की व्यवस्था करना आवश्यक है, जिससे जड़ों का बेहतर विकास होता है और पौधे नमी एवं पोषक तत्वों का प्रभावी उपयोग कर उच्च उपज देते हैं।

पीजेएचएम-2 की पौध संरचना

बीज उपचार एवं बुआई

बुआई से पूर्व बीजों का इमिडाक्लोप्रिड 2 मि.ली./कि.ग्रा. बीज तथा कार्बेण्डाजिम 1 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करें। इससे प्रारंभिक अवस्था में कीट एवं रोगों से सुरक्षा मिलती है। खरीफ मौसम में जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम पखवाड़े तक बुआई करना उपयुक्त रहता है। लगभग 20 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है। पौधों की उचित संख्या बनाए रखने के लिए 75×20 सें.मी. (66,666 पौधे/हैक्टर) अथवा 60×20 सें.मी. (83,333 पौधे/हैक्टर) की दूरी रखें। जलभराव की आशंका वाले क्षेत्रों में उठी हुई क्यारियों या मेड़ों पर बुआई करना लाभकारी रहता है।

भूमि तैयारी एवं पोषक तत्व प्रबंधन

उच्च उत्पादन के लिए खेत की 4-5 जुताइयां कर मृदा को भुरभुरी बनाएं तथा अंतिम जुताई के समय 5 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हैक्टर मिलाएं। संतुलित पोषण के लिए नाइट्रोजन 180-200 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 90 कि.ग्रा., पोटाश 60 कि.ग्रा. तथा जिंक सल्फेट 30-40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करें। इससे पौधों की स्वस्थ वृद्धि एवं अधिक उत्पादन प्राप्त होता है।

सिंचाई प्रबंधन

खरीफ मौसम में मक्का की फसल

सारणी: मक्का फसल में नाइट्रोजन उर्वरक का विभाजित अनुप्रयोग

फसल अवस्था	नाइट्रोजन की मात्रा (प्रतिशत)
आधार खुराक (बुआई के समय)	10
वी4 अवस्था (चार पत्ती अवस्था)	20
वी8 अवस्था (आठ पत्ती अवस्था)	20
वीटी अवस्था (टैसलिंग अवस्था)	40
जीएफ अवस्था (दाना भराव अवस्था)	10

नाइट्रोजन का विभाजित प्रयोग पोषक तत्व उपयोग दक्षता बढ़ाकर उच्च उपज सुनिश्चित करता है

सामान्यत: वर्षा आधारित होती है, फिर भी वर्षा की कमी होने पर बुआई के 15-20 दिनों बाद, घुटने तक ऊंचाई, टैसलिंग/पुष्पण, दाना भराव तथा दाना भराव के लगभग 10 दिनों बाद सिंचाई करें। मृदा एवं मौसम के अनुसार सामान्यत: 4-6 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार प्रबंधन

बुआई के बाद प्रारंभिक 30-40 दिनों तक मक्का की फसल के लिए खरपतवार-मुक्त रखना आवश्यक है। इस अवधि में खरपतवार पोषक तत्वों, नमी एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा कर उपज को

प्रमुख कीटों का प्रबंधन

दीमक

यह बीज एवं जड़ों को नुकसान पहुंचाती है। इसके नियंत्रण के लिए बुआई से पूर्व इमिडाक्लोप्रिड से बीजोपचार करें तथा आवश्यकता होने पर क्लोरोपाइरीफॉस का प्रयोग करें।

तनाछेदक

यह तनों में छेदकर 'डेड हार्ट' लक्षण उत्पन्न करता है। इसके प्रभावी नियंत्रण हेतु क्लोरैन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी150 मि.ली./हैक्टर का छिड़काव करें।

एफिड

ये कीट पत्तियों का रस चूसकर पौधों की वृद्धि को प्रभावित करते हैं। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 125 मि.ली./हैक्टर का छिड़काव करें।

फॉल आर्मी वर्म

यह हाल के वर्षों में मक्का का प्रमुख विनाशकारी कीट बनकर उभरा है। इसके नियंत्रण के लिए क्लोरैन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी 150 मि.ली./हैक्टर अथवा एमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी 220 ग्राम/हैक्टर का प्रयोग करें। जैविक नियंत्रण के लिए ट्राइकोग्रामा एवं मेटारहिजियम जैसे जैव एजेंटों का उपयोग भी प्रभावी एवं लाभकारी पाया गया है।

प्रभावित करते हैं।

रासायनिक नियंत्रण

खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण के लिए बुआई के दो दिनों के भीतर एट्राजीन 2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हैक्टर अथवा पेण्डीमेथिलीन 1.5 ली./हैक्टर का प्रयोग करें।

पश्च-उद्भव नियंत्रण

बुआई के लगभग 25 दिनों बाद लाउडिस 630 एससी 250 मि.ली./हैक्टर का छिड़काव करें।

पीजेएचएम-2 में दानों की अधिक पंक्तियां

दानों का आकर्षक स्वरूप

यांत्रिक नियंत्रण

आवश्यकता होने पर 20-25 दिनों बाद एक हल्की निराई-गुड़ाई करें।

अंतर-फसल क्रियाएं

अंकुरण के लगभग 10 दिनों बाद कमजोर पौधों की छंटाई कर प्रत्येक स्थान पर केवल एक स्वस्थ पौधा रखें। बुआई के लगभग 25 दिनों बाद पहली तथा 45 दिनों बाद पुष्पण से पूर्व दूसरी मृदा चढ़ाई करें। इन अंतर-फसल क्रियाओं से पौधों का गिरना कम होता है, जड़ों का विकास बेहतर होता है तथा फसल की वृद्धि एवं उत्पादन में सुधार होता है।

प्रमुख रोगों का प्रबंधन

पीजेएचएम-2 में पुष्पण तना सड़न तथा डाउनी मिल्ड्यू जैसे प्रमुख रोगों के प्रति अच्छी सहनशीलता पाई गई है। पुष्पण तना सड़न तनों को कमजोर कर पौधों के गिरने का कारण बनता है, जबकि डाउनी मिल्ड्यू पत्तियों पर सफेद वृद्धि उत्पन्न कर उपज को प्रभावित करता है। इस संकर की रोग सहनशीलता के कारण फसल सुरक्षा लागत कम होती है तथा उत्पादन अधिक स्थिर रहता है।

कटाई एवं भंडारण

पीजेएचएम-2 संकर बुआई के लगभग 90-95 दिनों बाद कटाई के लिए तैयार हो जाती है। कटाई के समय भुट्टों के आवरण सूखने लगते हैं तथा दानों के आधार पर काली परत दिखाई देने लगती है, जो इसकी परिपक्वता का संकेत है। कटाई के बाद भुट्टों को 3-4 दिनों तक अच्छी धूप में सुखाएं तथा भंडारण से पूर्व दानों की नमी 12-13 प्रतिशत तक अवश्य कम कर लें, ताकि भंडारण के दौरान गुणवत्ता सुरक्षित रहे।

दोहरे उपयोग की क्षमता

पीजेएचएम-2 एक दोहरे उपयोग वाला संकर है। इसके दाने खाद्यान्न के रूप में उपयोगी हैं, जबकि हरे डंठल एवं पत्तियां पशुओं के लिए पौष्टिक चारे के रूप में प्रयुक्त होती हैं। यह संकर साइलेज निर्माण के लिए भी उपयुक्त है, जिससे किसानों एवं पशुपालकों को अतिरिक्त आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

पीजेएचएम-2 खरीफ मौसम के लिए विकसित एक उच्च उत्पादक, रोग सहनशील एवं मध्य भारत की उपोष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए अनुकूलित संकर मक्का है। उचित फसल प्रबंधन अपनाने पर इसकी औसत उपज लगभग 82 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा अधिकतम उपज क्षमता 103 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त की जा सकती है।

प्रमुख रोगों के प्रति इसकी सहनशीलता, दाना एवं चारा दोनों उद्देश्यों के लिए उपयुक्तता तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में बेहतर प्रदर्शन इसे किसानों के लिए एक विश्वसनीय संकर बनाते हैं। इसलिए पीजेएचएम-2 का व्यापक प्रसार न केवल मक्का उत्पादकता एवं संसाधनों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देगा, बल्कि किसानों की आय में वृद्धि, चारा उपलब्धता तथा देश की मक्का आधारित कृषि प्रणाली की स्थिरता और खाद्य सुरक्षा को भी सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान देगा। ■

भारत विस्तार-डिजिटल कृषि का नया आयाम

विशाल दाधीच, हरनारायण मीना, दिनेश, भीमसेन और **जय प्रकाश मिश्र**

"भारत-विस्तार एक कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) आधारित बहुभाषी डिजिटल कृषि प्लेटफॉर्म है, जिसे वर्ष 2026 में किसानों को एकीकृत एवं त्वरित कृषि सेवाएं उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से शुरू किया गया। यह मंच भारतीय मौसम विभाग, भाकृअनुप, एग्री-स्टैक, मंडी सूचना प्रणाली तथा अन्य सरकारी स्रोतों की जानकारी को एक स्थान पर उपलब्ध करवाता है। किसान इसे मोबाइल ऐप, वेबसाइट और टोल-फ्री नंबर के माध्यम से उपयोग कर सकते हैं। इसमें 'भारती' नामक एआई सहायक किसानों को उनकी स्थानीय भाषा में आवाज और लिखित दोनों माध्यमों से सलाह प्रदान करती है। यह किसान की भौगोलिक स्थिति के अनुसार मौसम, फसल प्रबंधन, सरकारी योजनाओं, मृदा स्वास्थ्य, फसल बीमा, ऋण और सिंचाई संबंधी व्यक्तिगत जानकारी उपलब्ध करवाती है। यह प्लेटफॉर्म किसानों तक समय पर सटीक जानकारी पहुंचाकर निर्णय लेने की क्षमता को सशक्त बनाता है और डिजिटल कृषि को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है।"

हाल के वर्षों में कृषि क्षेत्र में डिजिटल तकनीकों का तेजी से विस्तार हुआ है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई), सैटेलाइट आधारित फसल निगरानी, आधुनिक कृषि उपकरण, मोबाइल ऐप, ऑनलाइन मंडी और डेटा आधारित परामर्श जैसी तकनीकों ने खेती को अधिक वैज्ञानिक और दक्ष बनाया है। इसके बावजूद कृषि संबंधी जानकारी आज भी विभिन्न सरकारी विभागों, पोर्टलों और संस्थानों में बिखरी हुई है।

मौसम, मंडी भाव, फसल प्रबंधन और सरकारी योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए किसानों को अलग-अलग प्लेटफॉर्म का सहारा लेना पड़ता है, जिससे समय की हानि होती है और भ्रम की स्थिति भी उत्पन्न होती है। भाषा संबंधी बाधाएं और विभिन्न प्रणालियों के बीच समन्वय की कमी के कारण छोटे एवं सीमांत किसान इन सेवाओं का पूरा लाभ नहीं उठा पाते।

इन्हीं चुनौतियों के समाधान के लिए भारत-विस्तार की शुरुआत 17 फरवरी

भाकृअनुप-कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, क्षेत्र-II, जोधपुर (राजस्थान)

आधुनिक खेती की हर जानकारी

एक कॉल पर त्वरित कृषि परामर्श

स्मार्ट खेती हेतु विश्वसनीय डिजिटल यंत्र

2026 को राज्य कृषि प्रबंधन संस्थान, जयपुर (राजस्थान) में की गई। यह केवल एक मोबाइल ऐप नहीं, बल्कि एक एकीकृत डिजिटल कृषि मंच है, जो मौसम, मंडी भाव, कृषि परामर्श और सरकारी योजनाओं सहित सभी आवश्यक सेवाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध करवाता है।

साथ ही, किसानों को उनकी अपनी भाषा में, आवश्यकता पड़ने पर आवाज के माध्यम से भी जानकारी प्रदान कर, यह प्लेटफॉर्म डिजिटल कृषि को अधिक सरल, सुलभ और प्रभावी बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

भारत-विस्तार के सिद्धांत

भारत-विस्तार केवल एक डिजिटल प्लेटफॉर्म नहीं, बल्कि किसानों को केंद्र में रखकर विकसित किया गया एक समावेशी, बुद्धिमान और एकीकृत कृषि तंत्र है। इसका उद्देश्य आधुनिक डिजिटल तकनीकों को भारतीय कृषि की वास्तविक आवश्यकताओं से जोड़ना है। यह प्लेटफॉर्म चार प्रमुख सिद्धांतों पर आधारित है:

किसान-प्रथम दृष्टिकोण

भारत-विस्तार का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है कि तकनीक किसानों की आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य करे। किसान मोबाइल ऐप, वेबसाइट, सहायता केंद्र या साधारण फोन के माध्यम से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। वे अपनी भाषा में प्रश्न पूछकर त्वरित समाधान प्राप्त कर सकते हैं, जिससे डिजिटल सेवाएं सभी किसानों के लिए सुलभ बनती हैं।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता एवं बहुभाषी तकनीक

यह प्लेटफॉर्म कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग कर मौसम, फसल प्रबंधन, कीट एवं रोग नियंत्रण तथा अन्य कृषि विषयों पर व्यक्तिगत सलाह प्रदान करता है। इसमें आवाज आधारित संवाद, 22 से अधिक भारतीय भाषाओं का समर्थन तथा फोटो के माध्यम से फसल रोगों की पहचान जैसी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं।

फेडरेटेड आर्किटेक्चर

भारत-विस्तार एक केंद्रीकृत प्रणाली नहीं, बल्कि विभिन्न सरकारी विभागों, अनुसंधान संस्थानों, निजी कंपनियों और स्टार्टअप्स को जोड़ने वाला एक सुरक्षित डिजिटल नेटवर्क है।

महत्व

भारत में कृषि क्षेत्र के डिजिटलीकरण के साथ किसानों के लिए अनेक मोबाइल ऐप और पोर्टल उपलब्ध हुए हैं, जो मौसम, मंडी भाव, फसल प्रबंधन और सरकारी योजनाओं जैसी सेवाएं प्रदान करते हैं। किंतु ये सेवाएं अलग-अलग प्लेटफॉर्म पर होने के कारण किसानों को पूरी जानकारी एक स्थान पर नहीं मिल पाती। भारत-विस्तार इसी समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है। यह एक एकीकृत डिजिटल मंच है, जो विभिन्न कृषि सेवाओं और सूचनाओं को एक प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध करवाकर किसानों को सरल, त्वरित और विश्वसनीय जानकारी प्रदान करता है:

- **एकीकृत डिजिटल मंच:** भारत-विस्तार भारतीय मौसम विभाग, भाकृअनु परिषद, मंडी सूचना प्रणाली, एग्री-स्टैक तथा अन्य सरकारी सेवाओं को एक साथ जोड़ता है। इससे किसानों को मौसम पूर्वानुमान, मंडी भाव, वैज्ञानिक कृषि सलाह और सरकारी योजनाओं की जानकारी एक ही स्थान पर प्राप्त होती है।
- **सभी किसानों के लिए सुलभ:** यह प्लेटफॉर्म मोबाइल ऐप, वेबसाइट और टोल-फ्री नंबर 155261 के माध्यम से उपलब्ध है। जिन किसानों के पास स्मार्ट फोन या इंटरनेट की सुविधा नहीं है, वे भी फोन के माध्यम से अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।
- **स्थानीय भाषा में संवाद:** भारत-विस्तार को 22 से अधिक भारतीय भाषाओं में कार्य करने के लिए विकसित किया गया है। किसान अपनी मातृभाषा में बोलकर या लिखकर प्रश्न पूछ सकते हैं और उन्हें सरल एवं स्पष्ट उत्तर प्राप्त होते हैं। इससे डिजिटल सेवाएं अधिक समावेशी बनती हैं तथा छोटे और सीमांत किसानों तक भी प्रभावी ढंग से पहुंचती हैं।

चुनौतियों का समाधान

भारत-विस्तार की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि किसान इसे कितनी सहजता से अपनाते हैं और इसकी सलाह पर कितना विश्वास करते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्लेटफॉर्म अभी भी अधिकांश किसानों के लिए नया अनुभव है, इसलिए इसकी विश्वसनीयता स्थापित करना आवश्यक होगा। इसके लिए स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप सटीक, अद्यतन और सरल भाषा में सलाह उपलब्ध करवाना जरूरी है। साथ ही, डिजिटल सेवाओं को कृषि प्रसार तंत्र, कृषि विज्ञान केंद्रों (केवीके), राज्य कृषि विभागों और अन्य संबंधित संस्थानों से प्रभावी ढंग से जोड़ना भी आवश्यक है। एक अन्य महत्वपूर्ण चुनौती इस प्लेटफॉर्म को गांव-गांव तक पहुंचाना तथा किसानों को इसके उपयोग के प्रति जागरूक बनाना है, ताकि वे इसे अपनी दैनिक कृषि गतिविधियों में अपनाकर अधिक लाभ प्राप्त कर सकें।

युवा एवं अनुभवी हर पीढ़ी के किसानों का डिजिटल कृषि साथी

इसमें डेटा अपने मूल स्रोत पर सुरक्षित रहता है और आवश्यकता के अनुसार सुरक्षित तरीके से साझा किया जाता है।

खुले एवं परस्पर जुड़ने योग्य मानक

यह प्लेटफॉर्म ओपन और आंतरिक कार्य (इंटर ऑपरेबल) मानकों पर आधारित है, जिससे विभिन्न संस्थाएं अपनी सेवाओं को आसानी से इससे जोड़ सकती हैं। इससे कृषि से संबंधित सभी प्रमुख सेवाओं का एकीकृत और प्रभावी डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र विकसित होता है।

ये चारों सिद्धांत भारत-विस्तार को किसानों के लिए एक भरोसेमंद, समावेशी, विस्तार योग्य और भविष्य उन्मुख डिजिटल कृषि मंच बनाते हैं।

किसानों के लिए लाभ

समय पर वैज्ञानिक सलाह

भारत-विस्तार किसानों को मौसम, मृदा और फसल की स्थिति के अनुसार त्वरित एवं वैज्ञानिक परामर्श उपलब्ध कराता है। इससे बुआई, सिंचाई, उर्वरक प्रबंधन और कटाई जैसे कृषि कार्य सही समय पर किए जा सकते हैं।

उत्पादन लागत में कमी

फसल की आवश्यकता के अनुरूप उर्वरक, सिंचाई और पौध संरक्षण उपायों की जानकारी मिलने से संसाधनों का संतुलित उपयोग होता है तथा अनावश्यक खर्च कम होता है।

मंडी भाव की अद्यतन जानकारी

किसानों को विभिन्न मंडियों के ताजा भाव एक ही मंच पर उपलब्ध होते हैं, जिससे वे उचित समय और स्थान पर अपनी उपज बेचकर बेहतर मूल्य प्राप्त कर सकते हैं तथा बिचौलियों पर निर्भरता घटती है।

सरकारी योजनाओं तक आसान पहुंच

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, फसल बीमा, ऋण, सब्सिडी और अन्य कृषि योजनाओं की जानकारी, आवेदन और प्रगति की स्थिति एक ही प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध रहती है।

डिजिटल सेवाओं की सरल उपलब्धता

मोबाइल ऐप, वेबसाइट और टोल-फ्री नंबर के माध्यम से किसान घर बैठे विभिन्न कृषि सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं, जिससे समय और श्रम की बचत होती है।

विशेषज्ञों से त्वरित परामर्श

किसान अपनी समस्याएं लिखकर, बोलकर या फसल की फोटो साझा कर विशेषज्ञों से सलाह प्राप्त कर सकते हैं, जिससे रोग एवं कीट प्रबंधन के लिए समय पर उचित समाधान मिल पाता है।

भारत-विस्तार, भारत में डिजिटल कृषि को सशक्त बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है। यह मौसम, वैज्ञानिक कृषि परामर्श, मंडी भाव, सरकारी योजनाओं और शोध आधारित जानकारी को एकीकृत कर किसानों तक सरल एवं त्वरित रूप में पहुंचाने का कार्य करता है। बहुभाषी समर्थन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, आवाज आधारित संवाद तथा खुले डिजिटल ढांचे जैसी विशेषताएं इसे अन्य प्लेटफॉर्मों से अलग बनाती हैं। इसकी व्यापक सफलता के लिए कृषि विज्ञान केंद्रों, कृषि प्रसार तंत्र, राज्य कृषि विभागों, निजी संस्थाओं, किसान संगठनों तथा कृषि आदानों के वितरकों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। प्रभावी जनजागरूकता और समन्वित प्रयासों के माध्यम से भारत-विस्तार किसानों को वैज्ञानिक निर्णय लेने में सक्षम बनाकर कृषि उत्पादकता, आय और डिजिटल समावेशन को नई दिशा प्रदान कर सकता है। ■

उपयोग विधि

- **टोल-फ्री नंबर के माध्यम से:** किसान किसी भी साधारण या स्मार्ट फोन से टोल-फ्री नंबर 155261 पर कॉल करके भारत-विस्तार की सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं। वे हिंदी या अन्य उपलब्ध भाषाओं में अपनी समस्या बोलकर मौसम, फसल प्रबंधन, कीट-रोग नियंत्रण तथा सरकारी योजनाओं से संबंधित जानकारी तुरंत प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए किसी ऐप डाउनलोड करने या पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होती।

- **मोबाइल ऐप के माध्यम से:** स्मार्टफोन उपयोगकर्ता गूगल प्ले स्टोर से भारत-विस्तार ऐप डाउनलोड कर सकते हैं। ऐप में उपलब्ध 'भारती' एआई सहायक किसान की भाषा, स्थान और किसान आईडी के आधार पर फसल प्रबंधन, मौसम, सरकारी योजनाओं तथा अन्य कृषि विषयों पर व्यक्तिगत एवं त्वरित सलाह प्रदान करती है।
- **वेबसाइट और चैटबॉट के माध्यम से:** किसान भारत-विस्तार की वेबसाइट या संबद्ध सरकारी पोर्टल पर उपलब्ध चैटबॉट का उपयोग कर भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसमें वे हिंदी या अंग्रेजी में प्रश्न लिखकर तुरंत उत्तर प्राप्त कर सकते हैं। कई सेवाएं बिना लॉगिन के भी उपलब्ध हैं, जिससे कंप्यूटर या मोबाइल के माध्यम से जानकारी प्राप्त करना और भी सरल हो जाता है।

सामुदायिक प्रयासों से मत्स्य संरक्षण

प्रणब गोगोई, दीपेन्द्र सिंह, थांगजम निरुपदा चानू और **अजय साहा**

“ मत्स्य अभयारण्य जलीय जैव विविधता के संरक्षण और मत्स्य उत्पादन बढ़ाने का एक प्रभावी माध्यम हैं। मेघालय के गारो हिल्स में स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी से स्थापित अभयारण्यों ने महसीर सहित अनेक देसी मत्स्य प्रजातियों के संरक्षण में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। मछली पकड़ने पर नियंत्रित प्रतिबंध, सामुदायिक नियमों के प्रभावी पालन तथा प्राकृतिक आवासों के संरक्षण से इन क्षेत्रों में मत्स्य संसाधनों का पुनर्जीवन संभव हुआ है। साथ ही, इको-टूरिज्म, मनोरंजक मत्स्य पर्यटन तथा इससे जुड़े छोटे उद्यमों ने स्थानीय लोगों के लिए आय और रोजगार के नए अवसर भी सृजित किए हैं। सामुदायिक सहभागिता पर आधारित यह संरक्षण मॉडल देश के अन्य क्षेत्रों में भी मत्स्य संसाधनों के सतत प्रबंधन और ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ीकरण के लिए प्रेरणा स्रोत बन सकता है। ”

मत्स्य अभयारण्य आंतरिक जल स्रोतों में मछलियों की संख्या बढ़ाने और जैव विविधता को सुरक्षित रखने का एक प्रभावी तरीका है। यह जलीय पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने और मत्स्य संसाधनों के लंबे समय तक संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सामुदायिक आधारित मत्स्य अभयारण्य आमतौर पर नदी या तालाब के कुछ हिस्सों, विशेषकर गहरे जल वाले क्षेत्रों में बनाए जाते हैं। इन स्थानों को स्थानीय लोग मिलकर सुरक्षित रखते हैं, जहां मछली पकड़ने पर पूर्ण या आंशिक प्रतिबंध लगाया जाता है। ये क्षेत्र गर्मी या सूखे के समय मछलियों के लिए सुरक्षित आश्रय का काम करते हैं और उनके प्रजनन में मदद करते हैं।

भारत में मत्स्य अभयारण्यों की परंपरा बहुत पुरानी है। पहले भी स्थानीय समुदाय धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारणों से जल स्रोतों और मछलियों की रक्षा करते रहे हैं। ऐसे अभयारण्य छोटे (लगभग 50 मीटर) से लेकर बड़े (20 किलोमीटर) नदी क्षेत्रों या तालाबों तक फैले हो सकते हैं, जहां मछली पकड़ने, बालू खनन और अन्य हानिकारक गतिविधियों पर रोक लगाई जाती है।

पश्चिम बंगाल की भागीरथी नदी में हिल्सा मछली के संरक्षण के लिए बनाया गया अभयारण्य इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसी तरह दक्षिण-पूर्व एशिया के कई देशों में भी मत्स्य अभयारण्य सफलतापूर्वक चलाए जा रहे हैं, जहां स्थानीय समुदाय और सरकार मिलकर काम करते हैं। वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण, कृषि विस्तार और नदियों में बदलाव (जैसे बांध निर्माण) के कारण जल स्रोतों पर दबाव बढ़ रहा है।

पारंपरिक मत्स्य प्रबंधन उपाय, जैसे मछली पकड़ने पर समय या आकार के अनुसार रोक, कई जगहों पर पर्याप्त प्रभावी नहीं रहे हैं। ऐसे में मत्स्य अभयारण्य एक बेहतर विकल्प के रूप में सामने आए हैं। यदि इन्हें सही तरीके से प्रबंधित किया जाए, तो ये न केवल मछलियों और अन्य जलीय जीवों की रक्षा करते हैं, बल्कि स्थानीय लोगों को आर्थिक और सामाजिक लाभ भी प्रदान करते हैं।

इस लेख में मेघालय के गारो हिल्स क्षेत्र के ऐसे ही सफल उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं, जहां समुदाय की भागीदारी से मत्स्य संरक्षण और आजीविका दोनों में सुधार हुआ है। यह मॉडल देश के अन्य क्षेत्रों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

मत्स्य अभयारण्यों का प्रबंधन

गारो हिल्स में मत्स्य अभयारण्यों की सफलता का मुख्य कारण स्थानीय समुदाय की सक्रिय भागीदारी है। यहां गांव के लोग मिलकर नदियों के कुछ हिस्सों और जल कुंडों (जिन्हें 'वारी' कहा जाता है) को सुरक्षित क्षेत्र घोषित करते हैं, जहां मछलियां आराम से रह सकें, बढ़ सकें और प्रजनन कर सकें। इन अभयारण्यों का संचालन पूरी तरह सामुदायिक स्तर पर किया जाता है। गांव की पारंपरिक संस्थाएं, जैसे नोकमा या डोरबार, इनके प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये संस्थाएं फिश सैंक्चुअरी मैनेजमेंट कमेटी बनाती हैं, जो अभयारण्य से संबंधित नियम तय करती हैं, निगरानी करती हैं और सुरक्षा सुनिश्चित करती हैं। गारो हिल्स क्षेत्र के प्रमुख मत्स्य अभयारण्यों में सिमसांग नदी पर स्थित वाची-वारी (रोम्बाग्रे गांव) और चिबोक नदी पर स्थित नेन्गमंडलग्रे अभयारण्य शामिल हैं। इन दोनों अभयारण्यों का प्रबंधन गांव के लोग द्वारा सफलतापूर्वक किया जा रहा है और ये अन्य क्षेत्रों के लिए एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

भाकृअनुप-केंद्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता-700120

मेघालय में मत्स्य प्रजातियों की विविधता

मेघालय राज्य प्राकृतिक जल संसाधनों से भरपूर है। यहां लगभग 5600 कि.मी. लंबी नदियां, 650 हैक्टर जलाशय, 500 हैक्टर आर्द्रभूमि (दलदल) और लगभग 50 हैक्टर झीलें पाई जाती हैं। ये सभी जल स्रोत मछलियों के रहने और बढ़ने के लिए बहुत अनुकूल वातावरण प्रदान करते हैं।

मेघालय में मछलियों की विविधता पर कई वर्षों से अध्ययन किए जा रहे हैं। पहले के अध्ययनों में लगभग 150-175 मछली प्रजातियों की जानकारी दी गई है। समय के साथ नई प्रजातियों की खोज के कारण यह संख्या बढ़ती गई है। हाल के अध्ययनों के अनुसार, मेघालय में 100 से अधिक मछली प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें मुख्य रूप से कार्प समूह (साइप्रिनिफॉर्मीस) और कैटफिश समूह (सिल्यूरिफॉर्मीस) की मछलियां अधिक पाई जाती हैं।

राज्य में जैव विविधता के संरक्षण के लिए कई संरक्षित क्षेत्र भी बनाए गए हैं। नेशनल वाइल्डलाइफ डाटाबेस सेल (वर्ष 2011) के अनुसार, मेघालय में पांच प्रमुख संरक्षित क्षेत्र हैं, जो विभिन्न प्रकार के वनस्पति एवं जीव-जंतु के लिए सुरक्षित आवास का काम करते हैं।

मेघालय में मत्स्य अभयारण्यों का विकास

मेघालय में मत्स्य अभयारण्य वे संरक्षित जल क्षेत्र हैं, जहां देसी मछलियों के संरक्षण और प्रजनन को बढ़ावा देने के लिए मछली पकड़ने पर अस्थायी या स्थायी प्रतिबंध लगाया जाता है। राज्य में सामुदायिक मत्स्य संरक्षण की शुरुआत वर्ष 1955 में अमलाये नदी से हुई, जब स्थानीय लोगों ने अत्यधिक दोहन से घटती मछली आबादी को बचाने के लिए स्वेच्छा से मछली पकड़ने पर रोक लगा दी।

इस पहल से महसीर जैसी महत्वपूर्ण मछलियों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई और अमलाये महसीर मछली अभयारण्य सामुदायिक संरक्षण का सफल मॉडल बन गया। बाद में मेघालय राज्य एक्वाकल्चर मिशन के सहयोग से राज्य में ऐसे अभयारण्यों का विस्तार हुआ। वर्ष 2018 तक इनकी संख्या लगभग 54 थी, जो वर्ष 2021 तक बढ़कर लगभग 79 हो गई। आज इन अभयारण्यों का संरक्षण स्थानीय समुदाय और सरकार की साझेदारी से सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

सिमसांग नदी-महसीर सहित अनेक देसी मछलियों का प्राकृतिक आवास

गारो हिल्स क्षेत्र में सामुदायिक मत्स्य अभयारण्य

मेघालय का गारो हिल्स क्षेत्र अपनी समृद्ध जैव विविधता और प्राकृतिक जल संसाधनों के लिए प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम गारो हिल्स जिलों में विभाजित है। यहां अरबेला और तुरा पर्वत श्रृंखलाओं के बीच स्थित बालप क्रम घाटी पारिस्थितिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है।

क्षेत्र की प्रमुख नदियों में सिमसांग, गानोल, जिन्जीराम और चिबोक शामिल हैं, जिनकी अनेक सहायक धाराएं जलीय जैव विविधता के लिए अनुकूल आवास प्रदान करती हैं। इनमें सिमसांग नदी, जो मेघालय की दूसरी सबसे बड़ी तथा गारो हिल्स की सबसे लंबी नदी है, महसीर सहित अनेक देसी मछली प्रजातियों का प्रमुख आवास है।

महसीर एवं अन्य स्थानीय मछलियों के संरक्षण के लिए गारो हिल्स में अब तक लगभग 25 सामुदायिक मछली अभयारण्य स्थापित किए जा चुके हैं, जिन्हें स्थानीय भाषा में 'वारी' (जल कुंड) कहा जाता है। इन अभयारण्यों ने जलीय जैव विविधता के संरक्षण के साथ-साथ स्थानीय समुदायों की आजीविका को भी सुदृढ़ किया है।

इसी प्रकार, बांग्ला देश में किए गए एक अध्ययन में अभयारण्य स्थापित होने के बाद आसपास के क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन में लगभग 11 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई। यह दर्शाता है कि सामुदायिक मत्स्य अभयारण्य जैव विविधता संरक्षण के साथ-साथ मत्स्य उत्पादन और ग्रामीण आय बढ़ाने का भी प्रभावी माध्यम हैं।

वाची-वारी मछली अभयारण्य

वाची-वारी गारो हिल्स क्षेत्र का एक पुराना और प्रसिद्ध मछली अभयारण्य है, जिसका संचालन वर्ष 1965 से रोम्बाग्रे गांव की विकास समिति द्वारा किया जा रहा है। बाद में इसे मेघालय राज्य एक्वाकल्चर मिशन के तहत सरकारी मान्यता भी प्राप्त हुई। यह अभयारण्य विशेष रूप से चॉकलेट महसीर (निओलिसोचिलस हेक्सागोनोलेपिस) मछली के लिए जाना जाता है और आज यह एक प्रमुख पर्यटन स्थल के रूप में भी विकसित हो चुका है।

वाची-वारी मछली अभयारण्य का क्षेत्रफल लगभग 0.1 हैक्टर है तथा इसकी औसत गहराई लगभग 2.5 मीटर है।

सारणी 1. मेघालय के प्रमुख संरक्षित क्षेत्र

संरक्षित क्षेत्र का नाम	क्षेत्रफल (वर्ग किमी)	स्थापना वर्ष	जिला
बलफकरम राष्ट्रीय उद्यान	220.0	1985	साउथ गारो हिल्स
नोकरेक रिज राष्ट्रीय उद्यान	47.48	1986	ईस्ट, वेस्ट एवं साउथ गारो हिल्स
बाघमारा पिचर प्लांट वन्यजीव अभयारण्य	0.02	1984	साउथ गारो हिल्स
नोंगखाईलेम वन्यजीव अभयारण्य	29.0	1981	री-भोई
सिजू वन्यजीव अभयारण्य	5.18	1979	साउथ गारो हिल्स

अभयारण्य का जल स्वच्छ एवं पारदर्शी है। यहां का पानी हल्का अम्लीय (पी-एच मान 6.8) तथा घुलित ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा से युक्त है, जो महसीर सहित अन्य देसी मत्स्य प्रजातियों के संरक्षण, प्रजनन और विकास के लिए अत्यंत अनुकूल वातावरण प्रदान करता है।

नेन्गमंडलग्रे मत्स्य अभयारण्य

यह अभयारण्य वर्ष 2015 में चिबोक नदी (सिमसांग की सहायक नदी) पर स्थापित किया गया। इसका क्षेत्रफल 0.5 हैक्टर से अधिक है और इसका प्रबंधन नेन्गमंडलग्रे ग्राम विकास परिषद द्वारा किया जाता है।यह स्थान महसीर मछली के संरक्षण के साथ-साथ इको-टूरिज्म के लिए भी विकसित किया गया है। यहां आने वाले पर्यटकों से नाममात्र का शुल्क लिया जाता है, जिसका उपयोग अभयारण्य के रखरखाव और विकास कार्यों में किया जाता है। स्थानीय समुदाय अवैध मछली पकड़ने को रोकने के लिए कड़े कदम उठाता है और आसपास के जलग्रहण क्षेत्र का भी संरक्षण करता है।

वाची-वारी मत्स्य अभयारण्य में महसीर का झुंड

सारणी 2. वाची-वारी अभयारण्य की जल गुणवत्ता

जल गुण	औसत मान (अक्टूबर)
पी-एच मान	6.8
पारदर्शिता	तल स्पष्ट दिखाई देता है
घुलित ऑक्सीजन	8.4 मि.ग्रा./लीटर
कुल क्षारीयता	19.0 मि.ग्रा./लीटर
विशिष्ट चालकता	48.8 माइक्रोसीमेंस/सें.मी. (µS/cm)
कुल घुलित ठोस	35.1 मि.ग्रा./लीटर
कुल कठोरता	47.2 मि.ग्रा./लीटर
कैल्शियम	7.2 मि.ग्रा./लीटर
मैग्नीशियम	6.9 मि.ग्रा./लीटर
नाइट्रेट	0.068 मि.ग्रा./लीटर
फॉस्फेट	0.004 मि.ग्रा./लीटर
सिलिकेट	21.08 मि.ग्रा./लीटर

सामुदायिक प्रबंधन के प्रमुख नियम

गारो हिल्स क्षेत्र के मछली अभयारण्यों में मछलियों की सुरक्षा और जल की स्वच्छता बनाए रखने के लिए स्थानीय स्थानीय लोगों द्वारा सख्त नियम लागू किए जाते हैं। अभयारण्य क्षेत्र में मछली पकड़ना पूरी तरह प्रतिबंधित है और जाल, कांटा, बिजली या विषैले रसायनों का उपयोग नहीं किया जाता। नियमों का उल्लंघन करने पर 10,000 से 30,000 रुपये तक जुर्माना लगाया जाता है तथा कुछ स्थानों पर अनाज या पशु के रूप में दंड भी दिया जाता है।

इन अभयारण्यों की निगरानी गांव के लोग स्वयं करते हैं। वे नियमित पहरा देते हैं और क्षेत्र की देखभाल करते हैं। साथ ही, पानी को स्वच्छ बनाए रखने के लिए नहाना, कपड़े धोना या कचरा डालना प्रतिबंधित है। इसके अतिरिक्त, इन अभयारण्यों से स्थानीय लोगों को आय के अवसर भी मिलते हैं, जैसे पर्यटकों से आय और छोटे व्यवसाय। मछलियों को आकर्षित करने के लिए मुरमुरा खिलाया जाता है, जो पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बनता है।

मछलियों को दाना खिलाने का रोमांच लेते पर्यटक

गारो हिल्स क्षेत्र के मछली अभयारण्य यह सिद्ध करते हैं कि स्थानीय समुदाय, पारंपरिक ज्ञान और सरकारी सहयोग के साथ मछली संसाधनों का प्रभावी संरक्षण संभव है। इससे न केवल महसीर जैसी महत्वपूर्ण मछलियों की संख्या बढ़ी है, बल्कि स्थानीय लोगों की आय और आजीविका में भी सुधार हुआ है।

यह मॉडल अन्य क्षेत्रों के लिए भी उपयोगी है। यदि सामुदायिक भागीदारी और टिकाऊ मत्स्य प्रबंधन को बढ़ावा दिया जाए, तो मछली उत्पादन और ग्रामीण आय दोनों में वृद्धि संभव है। इस मॉडल को अन्य राज्यों में अपनाकर मत्स्य उत्पादन और ग्रामीण आय को और बढ़ाया जा सकता है।

भेड़ और बकरियों के उत्पादों का मूल्यसंवर्धन

प्रेम पाल रोहिल्ला[1] और **बाबू लाल जांगिड़**[2]

"विश्व में भेड़ों और बकरियों की वर्तमान संख्या क्रमशः लगभग 1 अरब और 1.3 अरब है। एशिया में विश्व की 40.38 प्रतिशत भेड़ें तथा 63.78 प्रतिशत बकरियां पाई जाती हैं, जबकि भारत में विश्व की 4.54 प्रतिशत भेड़ें और 16.3 प्रतिशत बकरियां (20वीं पशुधन गणना) हैं। भेड़ एवं बकरी पालन छोटे किसानों और भूमिहीन परिवारों के लिए आय, रोजगार तथा पोषण का प्रमुख आधार है। वर्ष 2010-2020 के दौरान भारत से प्रतिवर्ष लगभग 9,000-11,500 मीट्रिक टन भेड़ एवं बकरी के मांस का निर्यात हुआ, जिससे 44-85 मिलियन अमेरिकी डॉलर की विदेशी मुद्रा अर्जित हुई। देश में प्रतिवर्ष लगभग 19 प्रतिशत भेड़ों तथा 38 प्रतिशत बकरियों का वध होता है। वर्तमान में भारत में भेड़ एवं बकरी के मांस की खपत 1 मिलियन टन से अधिक है तथा इसमें 2.3-10.1 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हो रही है। बढ़ती मांग को देखते हुए राजस्थान की भेड़ एवं बकरी नस्लों से मूल्यवर्धित उत्पाद विकसित कर पशुपालकों की आय बढ़ाने की व्यापक संभावनाएं हैं।"

राजस्थान अपनी उत्कृष्ट भेड़ एवं बकरी नस्लों और विशाल पशुधन संपदा के कारण मांस आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों के विकास की अपार संभावनाएं रखता है। बदलती उपभोक्ता मांग और आधुनिक उत्पादन प्रणालियों के अनुरूप इन संसाधनों का बेहतर उपयोग समय की आवश्यकता है।

छोटे जुगाली करने वाले पशु मांस के प्रमुख स्रोत हैं, फिर भी राजस्थान में इनकी व्यावसायिक क्षमता का अपेक्षित स्तर पर उपयोग नहीं हो पाया है। 20वीं पशुधन गणना (वर्ष 2020) के अनुसार राज्य में लगभग 79 लाख भेड़ें तथा 208.4 लाख बकरियां हैं।

प्रमुख बकरी नस्लों में मारवाड़ी, सिरोही, जाखराना और बरबरी, जबकि प्रमुख भेड़ नस्लों में चोकला, मारवाड़ी, जैसलमेरी और मगरा शामिल हैं।

हालांकि चरागाहों की कमी, कृषि क्षेत्र का विस्तार तथा पारंपरिक व्यापक चराई प्रणाली इन पशुओं के वैज्ञानिक एवं व्यावसायिक पालन में प्रमुख बाधाएं हैं। इसलिए अधिक उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता वाले मांस के लिए पारंपरिक प्रणाली के स्थान पर अर्धसघन एवं सघन पालन प्रणालियों को बढ़ावा देना आवश्यक है।

विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के बाद बदलते वैश्विक बाजार, उपभोक्ताओं

विपणन चुनौतियों का समाधान

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में भेड़-बकरियों की खरीद-बिक्री अभी भी असंगठित व्यवस्था पर आधारित है। चरवाहे गांवों से पशु खरीदकर बिचौलियों को बेचते हैं, जो उन्हें महानगरों तक पहुंचाते हैं। सामान्यतः 18-20 कि.ग्रा. वजन वाले वयस्क अथवा कम उत्पादक पशु 4,000-4,500 रुपये प्रति पशु, जबकि 22-25 कि.ग्रा. वजन वाले युवा मेमने 7,000-7,500 रुपये प्रति पशु में बिकते हैं। इस व्यवस्था में वास्तविक लाभ बिचौलियों को मिलता है, जबकि पशुपालकों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता। राजस्थान में संगठित वधशालाओं और वैज्ञानिक विपणन अवसंरचना का अभाव होने के कारण बड़ी संख्या में भेड़-बकरियों को गुजरात, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा महाराष्ट्र जैसे राज्यों में भेजा जाता है। वहीं, राज्य के कुछ प्रगतिशील पशुपालकों ने व्यावसायिक भेड़-बकरी पालन अपनाकर मांस उत्पादन तथा त्यौहारों के दौरान जीवित पशुओं की बिक्री से बेहतर आय प्राप्त की है। यदि ऐसे प्रदर्शन फार्म राज्य के अन्य क्षेत्रों में भी विकसित किए जाएं, तो व्यावसायिक मांस उत्पादन को उल्लेखनीय बढ़ावा मिल सकता है। वर्तमान में जीवित पशुओं के विपणन, स्वास्थ्य परीक्षण, स्वच्छ वध, मांस गुणवत्ता परीक्षण तथा संगठित मंडियों की कमी प्रमुख चुनौतियां हैं। टिकाऊ और लाभकारी मांस उत्पादन के लिए वैज्ञानिक पालन, पर्याप्त चारा, आधुनिक प्रसंस्करण, स्वच्छ वधशालाएं, प्रभावी विपणन, उपउत्पादों का बेहतर उपयोग तथा मूल्यवर्धित उत्पादों के विकास पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है

[1]प्रधान वैज्ञानिक (पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन); [2]प्रधान वैज्ञानिक (कृषि प्रसार), भाकृअनुप-कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, क्षेत्र-द्वितीय, काजरी कैम्पस, जोधपुर-342005 (राजस्थान)

चारा प्रबंधन

उत्पादन क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ चारा प्रबंधन और पोषण पर निरंतर ध्यान देना आवश्यक है। आधुनिक भेड़ एवं बकरी पालन प्रणालियों में लाभप्रदता सुनिश्चित करने के लिए ऐसी उपयोग रणनीतियां अपनानी होंगी, जो उत्पादन के साथ बाजार की मांग को भी पूरा करें। वर्तमान में उपभोक्ता केवल मटन और सेवन ही नहीं, बल्कि उच्च गुणवत्ता, विविधता और सुविधाजनक मूल्यवर्धित उत्पादों की भी अपेक्षा करते हैं। मांस की गुणवत्ता नस्ल, चारा, प्रबंधन, आयु, लिंग, वध एवं प्रसंस्करण जैसी अनेक बातों पर निर्भर करती है। विशेष रूप से शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में चारे की कमी व्यावसायिक मांस उत्पादन की प्रमुख चुनौती है, जिस पर प्राथमिकता से कार्य करने की आवश्यकता है।

मारवाड़ी नस्ल की भेड़

की गुणवत्ता संबंधी अपेक्षाओं और बढ़ती मांग को देखते हुए राजस्थान की भेड़ एवं बकरी नस्लों से मूल्यवर्धित मांस उत्पादों का विकास पशुपालकों की आय बढ़ाने और ग्रामीण उद्यमिता को सशक्त बनाने का महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है।

भारत और विदेशों में भेड़ एवं बकरी के मांस से अनेक मूल्यवर्धित उत्पाद विकसित किए गए हैं। विशेष रूप से वृद्ध पशुओं के कठोर मांस को पिसे हुए या पुनर्गठित (रीस्ट्रक्चर्ड) उत्पादों के रूप में प्रसंस्करित कर उसकी गुणवत्ता और स्वीकार्यता बढ़ाई जाती है। प्रमुख मूल्यवर्धित उत्पादों में कबाब, मीटबॉल, पैटी, अचार, बकरी के मांस का हैम, कीमा, टिक्का, क्रोकेट, मध्यम नमी वाले चंक्स, कम वसा वाले उत्पाद, मीट ब्लॉक, नगेट्स, मटन हैम तथा सॉसेज शामिल हैं।

भारतीय बाजारों में उपलब्ध भेड़ एवं बकरी का अधिकांश मांस बूढ़े पशुओं अथवा 6-12 माह आयु के नर मेमनों से प्राप्त होता है। झाड़ीदार वनस्पति पर आधारित पारंपरिक पालन के कारण इनका बाजार वजन प्रायः 15-16 कि.ग्रा. ही होता है, जिससे ड्रेसिंग प्रतिशत, मांस-हड्डी अनुपात तथा मांस की गुणवत्ता प्रभावित होती है। शोधों से स्पष्ट हुआ है कि शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में पूरक आहार देने से अंतिम वजन और मांस की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है।

अर्धसघन प्रणाली में 8-10 घंटे प्राकृतिक चराई के साथ एक दिन छोड़कर प्रति बच्चे 200 ग्राम सांद्र आहार देने से बकरी के मेमनों की वृद्धि दर पारंपरिक प्रणाली की तुलना में 55-57 प्रतिशत अधिक पाई गई। इससे पशुओं का स्वास्थ्य बेहतर रहता है तथा प्रति बच्चे लगभग 6,250 रुपये का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

इसी प्रकार, दो माह आयु के मारवाड़ी मेमनों को 6-8 घंटे चराई के साथ संतुलित पूरक आहार देने पर वे केवल 6 माह में लगभग 30 कि.ग्रा. वजन प्राप्त कर लेते हैं। इस तकनीक से पालन अवधि 12 माह से घटकर 6 माह रह जाती है तथा प्रति मेमना लगभग 8,250 रुपये का शुद्ध लाभ प्राप्त होने के साथ मृत्यु दर और पालन लागत में भी कमी आती है।

वैज्ञानिक प्रबंधन से स्वस्थ मेमने

मांस की बढ़ती मांग को देखते हुए भेड़ एवं बकरी पालन को पारंपरिक से व्यावसायिक मॉडल की ओर ले जाना आवश्यक है। सघन एवं अर्ध सघन पालन, जीवित भार आधारित विपणन, बिचौलियों की भूमिका में कमी तथा ग्रामीण मांस उत्पादन केंद्रों को बढ़ावा देकर पशुपालकों की आय बढ़ाई जा सकती है। साथ ही, प्रसंस्करित एवं मूल्यवर्धित मांस उत्पादों का विकास, आधुनिक प्रौद्योगिकियों का प्रसार तथा सरकार, सहकारी संस्थाओं और गैर-सरकारी संगठनों के समन्वित प्रयास राजस्थान के शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में छोटे पशुपालकों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ■

टिकाऊ खेती हेतु प्रभावी स्थायी क्यारी रोपण

शांति देवी बम्बोरिया[1], **दीप मोहन महला**[1] और **सुमित्रा देवी बम्बोरिया**[2]

"स्थायी क्यारी रोपण फसल स्थापना की एक उन्नत कृषि तकनीक है, जिसे विशेष रूप से अधिक वर्षा (550 मि.मी. से अधिक) वाले क्षेत्रों में जलभराव की समस्या कम करने तथा मृदा संरचना में सुधार के उद्देश्य से विकसित किया गया है। यह तकनीक उपज में कमी किए बिना प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने तथा उत्पादन लागत घटाने में सहायक है। क्यारी पर फसल उगाने से सिंचाई जल की लगभग 25 प्रतिशत तक बचत, बीज दर में 25-30 प्रतिशत तक कमी, फसल के गिरने एवं जलभराव की समस्या में कमी, खरपतवारों का कम अंकुरण तथा यांत्रिक निराई-गुड़ाई एवं उर्वरक प्रबंधन में सुविधा मिलती है। इसके अतिरिक्त, बेहतर सतही जल निकास के कारण कृषि कार्य समय पर संपन्न होते हैं और फसलों की समय पर बुआई सुनिश्चित होती है। नियंत्रित आवागमन एवं न्यूनतम जुताई से मृदा की संरचना एवं स्वास्थ्य में भी सुधार होता है। संसाधन संरक्षण एवं संरक्षण कृषि के सिद्धांतों पर आधारित यह तकनीक कम एवं अधिक वर्षा, दोनों प्रकार की कृषि परिस्थितियों में टिकाऊ एवं लाभकारी खेती के लिए एक प्रभावी विकल्प के रूप में उभर रही है।"

फसलों की बुआई स्थायी क्यारी रोपण तकनीक में भूमि की सतह से लगभग 8-12 इंच ऊंची क्यारियों पर की जाती है तथा सिंचाई नालियों के माध्यम से की जाती है। इससे सिंचाई जल की बचत होती है, मृदा में वायु संचार बेहतर होता है, जल निकास सुगम रहता है, मृदा कटाव कम होता है तथा फसल की वृद्धि एवं उपज में सुधार होता है। संसाधनों के कुशल उपयोग के कारण यह टिकाऊ एवं किफायती कृषि पद्धति के रूप में उभर रही है।

क्यारी रोपण का उपयोग विश्व के अनेक भागों में लंबे समय से जल प्रबंधन के प्रभावी साधन के रूप में किया जाता रहा है। परंपरागत रूप से इसका उद्देश्य अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अतिरिक्त जल के दुष्प्रभावों को कम करना तथा शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में सिंचाई दक्षता बढ़ाना रहा है।

वर्तमान समय में यह तकनीक सिंचाई जल की बचत, बेहतर जल निकास, खरपतवार नियंत्रण तथा मृदा संरक्षण जैसे अनेक लाभों के

[1]भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान, लुधियाना-141008 (पंजाब); [2]श्री करण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर-303329 (राजस्थान)

कारण किसानों के बीच तेजी से लोकप्रिय हो रही है। विशेष रूप से अस्थायी जलभराव के प्रति संवेदनशील फसलों के लिए यह तकनीक अधिक उपयुक्त मानी जाती है।

कपास, मक्का, सोयाबीन एवं गेहूं के साथ-साथ अब संकीर्ण उठी हुई क्यारियों पर धान की खेती भी सफलतापूर्वक की जा रही है।

स्थायी क्यारी रोपण प्रणाली

स्थायी क्यारी रोपण को सफलतापूर्वक अपनाने के लिए क्यारी का आकार एवं फसल के अनुसार पंक्तियों की संख्या का उचित निर्धारण आवश्यक है।

क्यारी की चौड़ाई

क्यारी की चौड़ाई ट्रैक्टर के पहियों की चौड़ाई एवं ट्रैक के अनुरूप होनी चाहिए, ताकि कृषि कार्यों के दौरान क्यारियां क्षतिग्रस्त न हों। भारतीय परिस्थितियों में 90-100 सें.मी. चौड़ी क्यारी सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती है।

पंक्तियों की संख्या

क्यारी पर पंक्तियों की संख्या क्यारी की चौड़ाई, फसल के प्रकार एवं अनुशंसित पंक्ति दूरी पर निर्भर करती है। सामान्यत: 1 मीटर चौड़ी क्यारी पर कपास, मक्का, सूरजमुखी एवं हरी मटर जैसी अधिक दूरी पर बोई जाने वाली फसलों की 2 पंक्तियां, सरसों, सोयाबीन एवं मूंग की 3 पंक्तियां तथा गेहूं एवं जौ जैसी अधिक घनत्व वाली फसलों की 4 पंक्तियां लगाई जाती हैं।

सारणी: विभिन्न फसलों के लिए स्थायी क्यारी पर रोपण विन्यास

फसल	प्रति क्यारी पंक्तियों की संख्या	पंक्ति से पंक्ति की दूरी (सें.मी.)
मक्का	2	67
कपास	2	67
सोयाबीन	3	35
मूंग	3	35
सूरजमुखी	2	67
गेहूं	4	23
सरसों	3	35
हरी मटर	2	45

क्यारी का निर्माण

स्थायी क्यारी के निर्माण तथा आवश्यकता अनुसार उनके पुन: आकार देने के लिए क्यारी मेकर का उपयोग करना चाहिए। क्यारी तैयार होने के बाद यह सुनिश्चित करें कि ट्रैक्टर एवं अन्य कृषि यंत्रों के पहिए केवल नालियों में ही चलें, ताकि क्यारियां क्षतिग्रस्त न हों।

अत्यधिक गीली मृदा की स्थिति में खेत में यांत्रिक कार्य करने से बचें, क्योंकि इससे क्यारी की संरचना प्रभावित हो सकती

लाभ

स्थायी क्यारी रोपण विश्वभर में तेजी से अपनाई जा रही संसाधन संरक्षण तकनीक है, क्योंकि यह फसल उत्पादन, मृदा स्वास्थ्य एवं जल प्रबंधन की दृष्टि से अनेक लाभ प्रदान करती है।

जलभराव का मक्का की फसल पर प्रभाव

क्यारी रोपण में जल का सतत निकास

जलभराव से सुरक्षा

पारंपरिक समतल खेतों में अधिक वर्षा के दौरान जलभराव की समस्या उत्पन्न हो जाती है, जिससे विशेष रूप से मक्का जैसी संवेदनशील फसलों की जड़ों में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। परिणामस्वरूप जड़ें सड़ने लगती हैं, पौधों की वृद्धि रुक जाती है, पोषक तत्वों का अवशोषण प्रभावित होता है तथा पौधे पीले पड़ने लगते हैं। अंतत: इसका प्रतिकूल प्रभाव उपज पर पड़ता है। इसके विपरीत, स्थायी क्यारी रोपण में अतिरिक्त जल नालियों के माध्यम से आसानी से निकल जाता है, जिससे जलभराव की समस्या कम होती है और फसल की स्वस्थ वृद्धि सुनिश्चित होती है।

चार पंक्तियों मे 23 सें.मी. पंक्ति दूरी पर रोपित गेहूं

है। प्रत्येक फसल की कटाई के बाद क्यारियों का निरीक्षण करें तथा आवश्यकता पड़ने पर उनका पुनः आकार दें।

विशेष रूप से खरीफ फसल की बुआई से पूर्व क्यारी का नवीनीकरण अवश्य करें, ताकि वर्षा के दौरान जलभराव की समस्या कम हो और फसल की बेहतर वृद्धि सुनिश्चित हो सके।

बुआई

स्थायी क्यारी प्रणाली में मृदा सतह पर मौजूद फसल अवशेषों के कारण सामान्य बुआई यंत्र, जैसे क्यारी प्लांटर एवं न्यूमेटिक प्लांटर, प्रभावी रूप से कार्य नहीं कर पाते। इसलिए ऐसी विशेष बुआई मशीनों की आवश्यकता होती है, जो क्यारी की संरचना को बिना क्षति पहुंचाए फसल अवशेषों के बीच सटीक बुआई करने के साथ-साथ उर्वरकों को भी उचित गहराई पर स्थापित कर सकें।

इस उद्देश्य के लिए डबल डिस्क प्लांटर अधिक उपयुक्त माना जाता है। इसमें अवशेष प्रबंधन डिस्क लगी होती हैं, जो फसल अवशेषों के बीच भी आसानी से बुआई सुनिश्चित करती हैं। यह बहु फसली यंत्र है, जिसमें बीज प्लेट बदलकर तथा टाइन की स्थिति समायोजित करके छोटे एवं बड़े दोनों प्रकार के बीजों की बुआई की जा सकती है। हालांकि, अधिक नमी की स्थिति में डबल डिस्क के बीच मृदा फंसने से बीज गिरने की प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है। इसलिए इस यंत्र का उपयोग केवल उपयुक्त मृदा नमी की अवस्था में ही करना चाहिए।

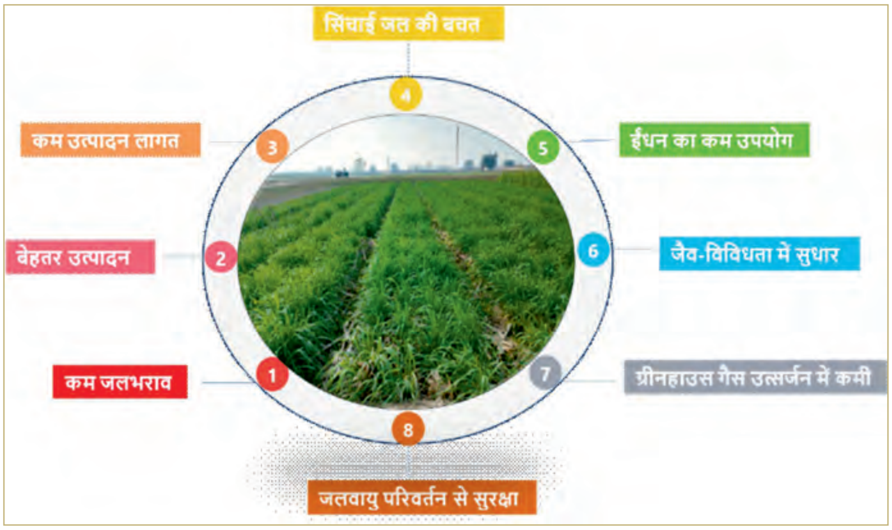

स्थायी क्यारी रोपण के प्रमुख लाभ

सिंचाई जल की बचत

स्थायी क्यारी रोपण में पूरे खेत में पानी भरने के बजाय क्यारी के बीच बनी नालियों के माध्यम से सिंचाई की जाती है। इस नालीदार सिंचाई प्रणाली से पानी का अपव्यय कम होता है, मृदा संरचना सुरक्षित रहती है तथा पारंपरिक बाढ़ सिंचाई की तुलना में लगभग 25 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत होती है।

इससे सिंचाई में श्रम एवं लागत दोनों घटते हैं। साथ ही, नालियां वर्षा जल के बेहतर संचयन में सहायक होती हैं, जबकि मृदा सतह पर फसल अवशेष वाष्पीकरण कम करके जल संरक्षण, मृदा तापमान नियंत्रण तथा जल उपयोग दक्षता बढ़ाते हैं। इसलिए यह तकनीक अर्धशुष्क एवं शुष्क क्षेत्रों के लिए विशेष रूप से लाभकारी है।

बेहतर खरपतवार प्रबंधन

स्थायी क्यारी प्रणाली में फसल अवशेषों की परत बने रहने से खरपतवारों का अंकुरण कम होता है तथा समय के साथ उनकी संख्या में भारी कमी आती है। इससे शाकनाशियों पर निर्भरता घटती है। इसके अतिरिक्त, क्यारी रोपण में अंतर पंक्ति निराई-गुड़ाई एवं यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है, जिससे गेहूं जैसी सघन फसलों में भी खरपतवार प्रबंधन अधिक प्रभावी एवं किफायती बनता है।

रोग एवं कीटों का कम प्रकोप

अध्ययनों से पता चला है कि स्थायी क्यारी पर फसल अवशेषों का संरक्षण गेहूं में जड़ रोग एवं निमेटोड की समस्या को कम करने में सहायक होता है। फसल अवशेष लाभकारी मृदा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ाते हैं, जो अनेक मृदा जनित रोगजनकों एवं निमेटोड के प्राकृतिक नियंत्रण में सहायता करते हैं। साथ ही, बेहतर वायु संचार के कारण फसल में आर्द्रता कम रहती है, जिससे नेत्रकार धब्बा रोग (शार्प आई स्पॉट एवं पाउडरी मिल्ड्यू जैसे रोगों का प्रकोप भी घटता है।

मृदा संरचना में सुधार

स्थायी क्यारी रोपण में ट्रैक्टर एवं कृषि यंत्रों के पहिए केवल नालियों में चलते

ऊंची क्यारियों में खेती के प्रकार

ऊंची क्यारियों (क्यारी) पर खेती मुख्यतः दो प्रकार से की जाती है-अस्थायी क्यारी रोपण एवं स्थायी क्यारी रोपण

अस्थायी क्यारी रोपण

यह विधि सामान्यतः जुताई आधारित खेती में अपनाई जाती है। प्रत्येक फसल की कटाई के बाद क्यारियों को जुताई द्वारा समतल कर दिया जाता है तथा अगली फसल के लिए नई क्यारियां तैयार की जाती हैं। इस प्रणाली में बुआई के लिए प्रायः न्यूमेटिक प्लांटर का उपयोग किया जाता है, जो एक ही बार में क्यारी निर्माण एवं बुआई दोनों कार्य करता है। यह मशीन बीजों को निर्धारित गहराई एवं उचित दूरी पर सटीक रूप से बोती है, जिससे बीज की बचत, समान अंकुरण, श्रम एवं समय की बचत तथा बेहतर फसल स्थापना सुनिश्चित होती है। साथ ही, बीजों को होने वाली भौतिक क्षति भी कम होती है। इस तकनीक का उपयोग मक्का, सोयाबीन, सूरजमुखी, कपास तथा विभिन्न सब्जी फसलों की बुआई में सफलतापूर्वक किया जाता है।

स्थायी क्यारी रोपण

यह प्रणाली संरक्षण कृषि अथवा न्यूनतम जुताई आधारित खेती के लिए अधिक उपयुक्त मानी जाती है। इसमें क्यारियों को प्रत्येक फसल के बाद तोड़ा नहीं जाता, बल्कि कई फसल चक्रों तक यथावत रखा जाता है। फसल कटाई के बाद अवशेष (भूसा) खेत में ही छोड़ दिए जाते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर केवल क्यारियों का हल्का पुनः आकार देकर अगली फसल की बुआई उसी क्यारी में की जाती है। इससे उत्पादन लागत कम होती है, मृदा कटाव एवं संघनन में कमी आती है, मृदा की भौतिक संरचना एवं जैविक गुणवत्ता में सुधार होता है तथा दीर्घकाल में संरक्षण कृषि को बढ़ावा मिलता है।

हैं, जिससे क्यारियों पर मृदा संघनन नहीं होता। फसल अवशेषों का संरक्षण मृदा की भौतिक संरचना, जल अंत: प्रवाह, जल धारण क्षमता तथा जैविक कार्बन में सुधार करता है। इससे मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है, पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उर्वरता में वृद्धि होती है तथा जड़ों का विकास अधिक गहराई तक होता है।

कम जुताई एवं फसल अवशेषों के संरक्षण से मृदा अपरदन और जल अपवाह भी कम होता है, जिससे दीर्घकाल में फसल उत्पादकता एवं मृदा स्वास्थ्य दोनों बेहतर बने रहते हैं।

आर्थिक लाभ

पारंपरिक खेती में बार-बार जुताई के कारण ईंधन, श्रम एवं उत्पादन लागत बढ़ जाती है। इसके विपरीत, स्थायी क्यारी रोपण में जुताई केवल क्यारी के नवीनीकरण तक सीमित रहती है। इससे ईंधन एवं श्रम की बचत होती है, उत्पादन लागत कमी तथा बेहतर उपज के कारण किसानों की शुद्ध आय एवं लाभप्रदता में वृद्धि होती है।

पर्यावरणीय लाभ

इस प्रणाली में फसल अवशेषों को मृदा की सतह पर संरक्षित रखा जाता है, जिससे पराली जलाने की आवश्यकता कम होती है और वायु प्रदूषण में कमी आती है। न्यूनतम अथवा शून्य जुताई से जीवाश्म ईंधन की खपत एवं कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन घटता है। साथ ही, मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों एवं अन्य जीवों की जैव विविधता बढ़ती है तथा समय के साथ अनेक वार्षिक घास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का प्रकोप भी कम हो जाता है, जिससे शाकनाशियों की आवश्यकता घटती है।

तीन पंक्तियों में 35 सें.मी. पंक्ति दूरी पर रोपित सरसों

टिकाऊ कृषि

स्थायी क्यारी रोपण जल संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य में सुधार तथा संसाधनों के कुशल उपयोग के माध्यम से टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देती है। फसल अवशेषों के संरक्षण एवं न्यूनतम जुताई से मृदा अपरदन कम होता है, जैविक कार्बन एवं मृदा गुणवत्ता में सुधार होता है तथा दीर्घकाल में उत्पादन प्रणाली अधिक स्थिर एवं टिकाऊ बनती है।

जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन

स्थायी क्यारी रोपण जलवायु परिवर्तन के अनुकूल एक प्रभावी कृषि तकनीक है। यह वर्षा की अनिश्चितता, सूखा, जलभराव एवं अन्य चरम मौसमीय परिस्थितियों के प्रभाव को कम करने में सहायक है। बेहतर मृदा स्वास्थ्य एवं जल प्रबंधन के कारण फसलें जलवायु संबंधी तनावों का बेहतर सामना कर पाती हैं। साथ ही, ईंधन की कम खपत एवं ग्रीनहाउस गैसों के कम उत्सर्जन के कारण यह तकनीक जलवायु परिवर्तन के शमन में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है।

स्थायी क्यारी रोपण के लाभ

स्थायी क्यारी रोपण केवल एक कृषि तकनीक नहीं, बल्कि संसाधन संरक्षण एवं टिकाऊ कृषि की प्रभावी पद्धति है। इसके अपनाने से फसल उत्पादकता में वृद्धि, सिंचाई जल की बचत, मृदा स्वास्थ्य में सुधार तथा उत्पादन लागत में कमी संभव है।

यह तकनीक प्राकृतिक संसाधनों के कुशल उपयोग के साथ दीर्घकालिक मृदा उर्वरता एवं कृषि स्थिरता को भी बढ़ावा देती है। साथ ही, जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों, जैसे सूखा, जलभराव एवं अनिश्चित वर्षा, के प्रति फसलों की सहनशीलता बढ़ाकर किसानों को बदलती मौसमीय परिस्थितियों के अनुरूप बेहतर ढंग से खेती करने में सहायता प्रदान करती है। ■

उपज में वृद्धि

स्थायी क्यारी रोपण खेत की सूक्ष्म जलवायु तथा मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार कर फसल की बेहतर वृद्धि सुनिश्चित करती है। इससे पौधे अधिक स्वस्थ रहते हैं और उपज में वृद्धि होती है। गेहूं जैसी फसलों में फसल गिरने (लॉजिंग) की आशंका कम होने से उपज हानि घटती है। क्यारी की किनारे वाली पंक्तियों को अधिक प्रकाश एवं वायु मिलने से सीमा प्रभाव का लाभ प्राप्त होता है, जिससे वृद्धि एवं उत्पादन में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, न्यूनतम जुताई के कारण अगली फसल की बुआई 10-15 दिनों पहले संभव हो जाती है, जिससे फसल सघनता एवं कुल उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

निवेदन

लेखक बंधु *खेती* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ निम्न पोर्टल पर ही अपने मोबाइल नम्बर के साथ भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी भेज सकते हैं।

हमारा पोर्टल है :
epatrika.icar.org.in

–संपादक

बहुउपयोगी वृक्ष है बुरांश

लोकेन्द्र सिंह, माम चन्द सिंह और **पी.एस. ब्रह्मानंद**

"बुरांश (रोडोडेंड्रोन) उत्तराखंड तथा अन्य हिमालयी राज्यों में व्यापक रूप से पाया जाने वाला एक प्रमुख वृक्ष है, जिसे पर्वतीय क्षेत्रों की पहचान और प्राकृतिक विरासत का प्रतीक माना जाता है। वसंत ऋतु में इसके आकर्षक लाल, गुलाबी तथा कभी-कभी सफेद फूल पूरे पहाड़ी परिदृश्य को मनमोहक बना देते हैं। अपनी अद्भुत प्राकृतिक सुंदरता के साथ-साथ बुरांश औषधीय, पर्यावरणीय, सांस्कृतिक एवं आर्थिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। बुरांश मुख्यत: हिमालयी क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से उगता है। भारत में इसका विस्तार उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, सिक्किम तथा अरुणाचल प्रदेश तक है। इसके अतिरिक्त नेपाल और भूटान में भी इसकी अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। यह सामान्यत: समुद्र तल से 1,500 से 3,500 मीटर की ऊंचाई वाले शीतोष्ण पर्वतीय वनों में अच्छी तरह विकसित होता है। बुरांश अपनी आकर्षक सुंदरता, पर्यावरणीय महत्व, औषधीय उपयोगिता तथा व्यावसायिक संभावनाओं के कारण बागवानी एवं भू-दृश्य निर्माण का एक बहुउपयोगी वृक्ष है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसके व्यापक रोपण से न केवल प्राकृतिक सौंदर्य और जैव विविधता का संरक्षण संभव है, बल्कि नर्सरी, प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धित उत्पादों के माध्यम से स्थानीय समुदायों के लिए आय एवं रोजगार के नए अवसर भी सृजित किए जा सकते हैं।"

संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र, भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली

बुरांश एक विशिष्ट हिमालयी सदाबहार वृक्ष है, जिसकी स्वस्थ वृद्धि, पुष्पण तथा दीर्घायु के लिए अनुकूल जलवायु अत्यंत आवश्यक है। यह मुख्यत: पर्वतीय क्षेत्रों की ठंडी, आर्द्र एवं स्वच्छ जलवायु में प्राकृतिक रूप से विकसित होता है।

बुरांश की अच्छी वृद्धि के लिए 10-20 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वाधिक उपयुक्त माना जाता है। यह वृक्ष हल्के पाले को सहन करने की क्षमता रखता है, किंतु 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान इसकी वृद्धि तथा पुष्पण पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इसकी उचित वृद्धि के लिए मध्यम से अधिक वर्षा आवश्यक होती है।

मानसून के दौरान होने वाली नियमित वर्षा पौधों की बढ़वार में सहायक होती है, जबकि जलभराव की स्थिति इसकी जड़ों के लिए हानिकारक सिद्ध होती है।

बुरांश के लिए 60-80 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता वाली जलवायु अनुकूल मानी जाती है। साथ ही, आंशिक छाया में इसका विकास बेहतर होता है। प्राकृतिक वनों में यह प्राय: बड़े वृक्षों की छाया के नीचे अच्छी तरह विकसित होता है, जहां इसे पर्याप्त नमी और अनुकूल सूक्ष्म जलवायु प्राप्त होती है।

बुरांश के सफल प्रवर्धन के लिए उद्देश्य के अनुसार उपयुक्त विधि का चयन आवश्यक है। प्राकृतिक वनीकरण एवं जैव विविधता संरक्षण के लिए बीज द्वारा प्रवर्धन सर्वोत्तम माना जाता है, जबकि गुणवत्तायुक्त एवं एकरूप पौध उत्पादन के लिए कटिंग अधिक उपयुक्त है। वहीं, दीर्घकालिक संरक्षण, दुर्लभ प्रजातियों के संवर्धन तथा व्यावसायिक विस्तार के लिए ऊतक संवर्धन एक प्रभावी और आधुनिक विकल्प है।

उपयोगिता

बुरांश एक आकर्षक हिमालयी सदाबहार वृक्ष है, जिसका बागवानी एवं भू-दृश्य निर्माण में विशेष महत्व है। अपने मनमोहक पुष्पों, सदाबहार पत्तियों तथा विभिन्न पर्यावरणीय एवं आर्थिक गुणों के कारण यह सजावटी उद्यानों से लेकर संरक्षण आधारित उद्यानिकी तक अनेक क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध हो रहा है। कम रखरखाव, स्थानीय जलवायु के प्रति अनुकूलता तथा मूल्यवर्धित उत्पादों की संभावनाओं के कारण इसकी व्यावसायिक उपयोगिता भी लगातार बढ़ रही है।

सजावटी उद्यानिकी

बुरांश के आकर्षक लाल, गुलाबी एवं

नर्सरी प्रबंधन

- पौधों के लिए आंशिक छाया की व्यवस्था करें।
- हल्की, अम्लीय तथा जल-निकास वाली मृदा का उपयोग करें।
- जलभराव से बचाव सुनिश्चित करें।
- जैविक खाद का नियमित प्रयोग करें।

बुरांश के घने वृक्ष

सफेद फूल इसे उत्कृष्ट सजावटी वृक्ष बनाते हैं। वसंत ऋतु में इसका सामूहिक पुष्पण उद्यानों को आकर्षक स्वरूप प्रदान करता है। इसी कारण इसका उपयोग हिल स्टेशन, बोटैनिकल गार्डन, ईको-पार्क, सार्वजनिक उद्यानों तथा पर्यटन स्थलों की लैंडस्केपिंग में व्यापक रूप से किया जाता है।

प्रवर्धन

बुरांश एक महत्वपूर्ण हिमालयी सदाबहार वृक्ष है, जिसका प्रवर्धन इसके संरक्षण, वनीकरण, भू-दृश्य विकास तथा व्यावसायिक उपयोग की दृष्टि से अत्यंत आवश्यक है। इसका प्रवर्धन मुख्यत: बीज, कटिंग तथा ऊतक संवर्धन (टिश्यू कल्चर) द्वारा किया जाता है।

बीज द्वारा प्रवर्धन

बीज द्वारा प्रवर्धन बुरांश की प्राकृतिक एवं सर्वाधिक प्रचलित विधि है, जिसका उपयोग विशेष रूप से वानिकी एवं संरक्षण कार्यक्रमों में किया जाता है। इसके परिपक्व फल (कैप्सूल) मई-जून में एकत्र किए जाते हैं। बीज अत्यंत छोटे होने के कारण इन्हें रेत एवं पीट मॉस अथवा पत्ती की खाद (1:1) से तैयार माध्यम में बोया जाता है। इसके लिए हल्की अम्लीय मृदा (पी-एच मान 5.0-6.5) सर्वोत्तम मानी जाती है। बीजों को मृदा से ढकने के बजाय केवल हल्का दबाना चाहिए तथा स्प्रे द्वारा सिंचाई करनी चाहिए। अंकुरण के लिए छायादार एवं आर्द्र वातावरण आवश्यक होता है और सामान्यत: 2-4 सप्ताह में अंकुरण हो जाता है। यह विधि बड़े पैमाने पर पौध उत्पादन तथा प्राकृतिक विविधता के संरक्षण के लिए उपयुक्त है। हालांकि, इस विधि से तैयार पौधों में एकरूपता नहीं रहती तथा पुष्पण होने में लगभग 8-10 वर्ष का समय लग सकता है।

कटिंग द्वारा प्रवर्धन

समान गुणों वाले पौध तैयार करने के लिए कटिंग सबसे उपयुक्त विधि है। जून-जुलाई में 10-15 सें.मी. लंबी अर्धकाष्ठीय कटिंग तैयार की जाती है तथा उसकी निचली पत्तियां हटा दी जाती हैं। कटिंग को आईबीए के 1000-3000 पीपीएम घोल से उपचारित कर रेत एवं पीट मॉस (1:1) के माध्यम में मिस्ट चेंबर अथवा पॉलीहाउस में लगाया जाता है। लगभग 6-10 सप्ताह में जड़ों का विकास हो जाता है। इस विधि से तैयार पौधों में मातृ पौधे के सभी वांछित गुण बने रहते हैं तथा उनमें अपेक्षाकृत शीघ्र पुष्पण होता है।

ऊतक संवर्धन (टिश्यू कल्चर)

ऊतक संवर्धन बुरांश के प्रवर्धन की आधुनिक एवं वैज्ञानिक विधि है। इसके माध्यम से कम समय में बड़ी संख्या में रोगमुक्त एवं एकरूप पौधे तैयार किए जा सकते हैं। यह तकनीक विशेष रूप से दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण तथा व्यावसायिक स्तर पर गुणवत्तापूर्ण पौध उत्पादन के लिए उपयोगी है। हालांकि, इस विधि के लिए विशेष प्रयोगशाला सुविधाओं, प्रशिक्षित तकनीकी विशेषज्ञों तथा अपेक्षाकृत अधिक लागत की आवश्यकता होती है।

भू-दृश्य निर्माण

भू-दृश्य निर्माण में बुरांश सौंदर्य और पारिस्थितिक संतुलन का उत्कृष्ट संयोजन प्रस्तुत करता है। यह पर्वतीय ढलानों, टेरेस गार्डन, सड़क किनारे ऐवन्यू रोपण तथा शैक्षणिक एवं संस्थागत परिसरों के हरित विकास के लिए उपयुक्त वृक्ष है। इसकी सदाबहार पत्तियां वर्षभर हरियाली बनाए रखती हैं, जिससे प्राकृतिक सौंदर्य और पर्यावरणीय गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है।

नर्सरी एवं पौध उत्पादन

बुरांश के पौधों की मांग सजावटी एवं संरक्षण कार्यो के कारण लगातार बढ़ रही है। बीज, कटिंग तथा अन्य प्रवर्धन विधियों द्वारा गुणवत्तापूर्ण पौध तैयार कर व्यावसायिक नर्सरी स्थापित की जा सकती हैं। विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में यह स्वरोजगार और उद्यमिता का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

फ्लोरीकल्चर एवं मूल्यवर्धित उत्पाद

यद्यपि बुरांश पारंपरिक कर्तित पुष्प फसल नहीं है, फिर भी इसके फूल सजावटी पुष्प-सज्जा, स्थानीय उत्सवों तथा ईको-फेस्टिवल्स में उपयोग किए जाते हैं। इसके फूलों से शरबत, जूस, स्क्वैश, सिरप तथा शुष्क पुष्प जैसे मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनकी बाजार में अच्छी मांग है।

औषधीय एवं न्यूट्रास्यूटिकल उपयोग

बुरांश के फूल औषधीय गुणों से भरपूर होते हैं। इनका उपयोग हर्बल पेय, स्वास्थ्यवर्धक

पेय पदार्थ तथा अन्य न्यूट्रास्यूटिकल उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। इससे बागवानी आधारित प्रसंस्करण उद्योगों को भी प्रोत्साहन मिलता है।

संरक्षण एवं जैव विविधता

देसी हिमालयी प्रजाति होने के कारण बुरांश का उपयोग बोटैनिकल गार्डन, अनुसंधान संस्थानों तथा जर्मप्लाज्म संरक्षण कार्यक्रमों में किया जाता है। यह दुर्लभ आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण तथा जैव विविधता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पर्यावरणीय लाभ

बुरांश का वृक्ष स्थानीय सूक्ष्म जलवायु को संतुलित रखने में सहायक है। यह परागणकर्ताओं, विशेषकर मधुमक्खियों एवं अन्य लाभकारी कीटों को आकर्षित कर प्राकृतिक परागण को बढ़ावा देता है। साथ ही पर्वतीय एवं शहरी क्षेत्रों में हरित आवरण बढ़ाने, मृदा संरक्षण तथा पर्यावरणीय गुणवत्ता सुधारने में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

सतत एवं जैविक बागवानी में भूमिका

बुरांश को अपेक्षाकृत कम रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता होती है तथा यह जैविक खाद एवं प्राकृतिक परिस्थितियों में बेहतर विकसित होता है। इसलिए यह सतत, पर्यावरण अनुकूल एवं जैविक बागवानी प्रणालियों के लिए एक आदर्श वृक्ष माना जाता है।

बाजार मूल्य

बुरांश के पौधों, फूलों तथा उनसे तैयार मूल्यवर्धित उत्पादों की मांग लगातार बढ़ रही है, जिससे इसकी व्यावसायिक संभावनाएं भी सुदृढ़ हुई हैं। पौधों का मूल्य मुख्यत: उनकी आयु, आकार, प्रजाति तथा वृद्धि की अवस्था पर निर्भर करता है। सामान्यत: छोटे आकार के पौधे अथवा छोटे गमलों में तैयार पौधे 200-800 रुपये तक उपलब्ध होते हैं, जबकि अच्छी वृद्धि वाले या विकसित पौधों का मूल्य 1,500 रुपये अथवा उससे अधिक हो सकता है।

बुरांश के ताजे एवं सूखे दोनों प्रकार के फूल बाजार में विक्रय किए जाते हैं। सामान्यत: ताजे फूल 30-70 रुपये प्रति कि.ग्रा. तथा सूखे फूल 550-900 रुपये प्रति कि.ग्रा. तक बिकते हैं। इसके अतिरिक्त बुरांश से तैयार शरबत, जूस, स्क्वैश, सिरप तथा अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों की बढ़ती मांग पर्वतीय क्षेत्रों में उद्यमिता और आय सृजन के नए अवसर प्रदान कर रही है।

बुरांश का आकर्षक पुष्प

संरक्षण एवं वर्तमान चुनौतियां

बुरांश के प्राकृतिक आवास पर वनों की कटाई, अनियंत्रित दोहन, जलवायु परिवर्तन तथा फूलों की अत्यधिक तुड़ाई के कारण लगातार दबाव बढ़ रहा है। इन कारणों से इसके प्राकृतिक पुनर्जनन तथा जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इसके संरक्षण के लिए वैज्ञानिक एवं टिकाऊ प्रबंधन अपनाना आवश्यक है। इसके अंतर्गत प्राकृतिक वनों का संरक्षण, फूलों की नियंत्रित तुड़ाई, सामुदायिक वन प्रबंधन को बढ़ावा, व्यावसायिक खेती एवं नर्सरी विकास को प्रोत्साहन तथा जनजागरूकता कार्यक्रमों का विस्तार महत्वपूर्ण कदम हैं।

बुरांश केवल एक आकर्षक वृक्ष नहीं, बल्कि हिमालयी पारिस्थितिकी, संस्कृति और स्थानीय आजीविका का महत्वपूर्ण आधार है। इसका संरक्षण प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने के साथ-साथ स्थानीय समुदायों की आजीविका, पारंपरिक ज्ञान और जैव विविधता की सुरक्षा के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। ■

सूचना

ग्राहकों से निवेदन है कि वे *'खेती'* पत्रिका हेतु अपना चंदा समय से पूर्व भेजने की व्यवस्था करें, ताकि पत्रिका समय पर और लगातार मिलती रहे। यदि आपका पता बदल गया है तो उसकी तुरंत सूचना दें। इसके लिए अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख अवश्य करें।

व्यवसाय प्रभारी
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा,
नई दिल्ली-110012

संतुलित उर्वरक उपयोग के लाभ

- अनाज फसलों की उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है।
- उत्पादन लागत में कमी आती है।
- पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ती है।
- मृदा की उर्वराशक्ति लंबे समय तक बनी रहती है।
- जल एवं पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है।
- कृषि प्रणाली अधिक टिकाऊ तथा लाभकारी बनती है।
- प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में सहायता मिलती है।

खाद्यान्न फसलों में संतुलित उर्वरक प्रबंधन

ऋचा जसवाल[1] और **मीनाक्षी**[2]

“ भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है, जहां गेहूं, धान, मक्का, जौ तथा विभिन्न श्री अन्न फसलें खाद्य सुरक्षा की आधारशिला हैं। बढ़ती जनसंख्या, सीमित कृषि भूमि और प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ते दबाव के कारण प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पादन प्राप्त करना आज की प्रमुख आवश्यकता है। इसके लिए उन्नत किस्मों, सिंचाई, आधुनिक कृषि तकनीकों तथा संतुलित पोषक प्रबंधन का समन्वित उपयोग आवश्यक है। उर्वरक फसलों की पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति कर उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, किंतु इनका असंतुलित या गैर वैज्ञानिक उपयोग उत्पादन क्षमता घटाने के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य, जल गुणवत्ता और पर्यावरण पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। इसलिए मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का संतुलित एवं वैज्ञानिक उपयोग ही टिकाऊ कृषि और दीर्घकालिक उत्पादकता की कुंजी है। ”

फसल की आवश्यकता, मृदा की उर्वरता तथा स्थानीय जलवायु के अनुसार नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का उचित स्रोत, उचित मात्रा, उचित समय और उचित विधि से प्रयोग करना संतुलित उर्वरक उपयोग कहलाता है। इसका उद्देश्य केवल अधिक उपज प्राप्त करना नहीं, बल्कि पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ाना, उत्पादन लागत कम करना, मृदा स्वास्थ्य बनाए रखना तथा टिकाऊ और पर्यावरण अनुकूल कृषि को प्रोत्साहित करना भी है।

पिछले कुछ दशकों में अधिक उत्पादन की चाह में किसानों द्वारा, विशेषकर यूरिया जैसे उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग बढ़ा है। परिणामस्वरूप, मृदा में पोषक तत्वों का संतुलन बिगड़ने लगा है तथा फॉस्फोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी की समस्या कई क्षेत्रों में उभरकर सामने आई है। इसके अलावा, लगातार असंतुलित उर्वरक प्रयोग के कारण मृदा स्वास्थ्य में कमी, जैविक कार्बन की कमी तथा पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता में कमी भी देखी गई है।

असंतुलित पोषण से फसलों की वृद्धि, उत्पादन क्षमता तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता प्रभावित होती है, जिससे उत्पादन लागत बढ़ती है और पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो सकती है। इसलिए, मृदा उर्वरता बनाए रखने, पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ाने तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने के लिए संतुलित उर्वरक प्रबंधन आवश्यक है।

प्रमुख पोषक तत्वों की भूमिका

नाइट्रोजन

यह तत्व पौधों की वृद्धि, हरितिमा तथा प्रोटीन निर्माण के लिए अत्यंत आवश्यक तत्व है। यह पत्तियों और तनों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को व्यवस्थित करता है। इसकी कमी होने पर पौधों की पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं, वृद्धि धीमी हो जाती है तथा फसल की उपज में कमी आ सकती है। दूसरी ओर, नाइट्रोजन की अत्यधिक मात्रा भी पौधों को गिरने (लॉजिंग), रोगों तथा कीटों के प्रति अधिक संवेदनशील बना सकती है। इसलिए नाइट्रोजन की अनुशंसित मात्रा को विभाजित खुराकों में देने से इसकी उपयोग दक्षता बढ़ती है तथा पोषक तत्वों की हानियां कम होती हैं।

फॉस्फोरस

यह जड़ों के विकास, पुष्पण, दानों के निर्माण तथा ऊर्जा स्थानांतरण की प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पौधों की प्रारंभिक वृद्धि को प्रोत्साहित करता है तथा मजबूत जड़ तंत्र के विकास में सहायता करता है। फॉस्फोरस की पर्याप्त उपलब्धता से पौधों की पोषक तत्वों को ग्रहण करने की क्षमता बढ़ती है और फसल का समुचित विकास सुनिश्चित होता है। इसकी कमी होने पर पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है तथा उपज में कमी आ सकती है।

पोटाश

यह पौधों में विभिन्न जैव-रासायनिक क्रियाओं के संचालन में सहायक होता है।

[1]अनुसंधान सहयोगी, मृदा विज्ञान विभाग; [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ, सस्य विज्ञान विभाग, सी.एस.के. हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर

यह पौधों को सूखा, रोग तथा कीटों के प्रति अधिक सहनशील बनाता है तथा जल उपयोग दक्षता में सुधार करता है। इसके अतिरिक्त, पोटाश दानों के भराव, गुणवत्ता तथा भंडारण क्षमता को बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पर्याप्त पोटाश उपलब्ध होने पर फसलों से बेहतर और गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त होता है।

मृदा परीक्षण का महत्व

मृदा परीक्षण संतुलित उर्वरक प्रबंधन का आधार माना जाता है। इसके माध्यम से खेत की मृदा में उपलब्ध विभिन्न पोषक तत्वों की वास्तविक स्थिति तथा मृदा की उर्वरता का सही आकलन किया जा सकता है। मृदा परीक्षण से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कौन से पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं और किन तत्वों की कमी है। इसके आधार पर फसल की आवश्यकता के अनुसार उर्वरकों की उचित मात्रा निर्धारित की जा सकती है।

मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रबंधन से न केवल उत्पादन लागत कम होती है, बल्कि पोषक तत्वों के अनावश्यक एवं असंतुलित प्रयोग से होने वाले अपव्यय को भी रोका जा सकता है। इससे उर्वरकों की उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है तथा फसल को आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में उपलब्ध हो पाते हैं। परिणामस्वरूप फसल की वृद्धि, उपज एवं गुणवत्ता में सुधार होता है।

इसके अतिरिक्त, नियमित अंतराल पर मृदा परीक्षण करवाने से मृदा स्वास्थ्य की निगरानी की जा सकती है तथा समय रहते पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए आवश्यक उपाय अपनाए जा सकते हैं। इससे मृदा की उर्वराशक्ति लंबे समय तक बनी रहती है और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा मिलता है। इसलिए किसानों को समय-समय पर मृदा परीक्षण करवाकर वैज्ञानिक अनुशंसाओं के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।

समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन

केवल रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहने के बजाय जैविक स्रोतों जैसे गोबर की सड़ी खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, हरी खाद तथा जैव उर्वरकों का भी उपयोग करना चाहिए। रासायनिक एवं जैविक स्रोतों के समन्वित प्रयोग को समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य फसलों को आवश्यक पोषक तत्वों की संतुलित आपूर्ति सुनिश्चित करने के साथ-साथ मृदा की उर्वराशक्ति को लंबे समय तक बनाए रखना है।

जैविक स्रोत मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाकर उसकी संरचना, जल धारण क्षमता तथा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता में सुधार करते हैं, जबकि रासायनिक उर्वरक फसलों की तत्काल पोषक तत्व आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होते हैं। इन दोनों स्रोतों के समन्वित प्रयोग से मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों में सुधार होता है और पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता भी बढ़ती है।

इसके अतिरिक्त, जैव उर्वरकों जैसे राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलम तथा फॉस्फेट घुलनशील जीवाणुओं के उपयोग से वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण तथा मृदा में उपलब्ध न होने वाले पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने में सहायता मिलती है। इससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है तथा उत्पादन लागत में भी कमी आती है।

समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाने से फसल उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार होता है, मृदा स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है तथा पर्यावरणीय प्रदूषण को कम करने में सहायता मिलती है। इसलिए दीर्घकालीन दृष्टि से यह प्रबंधन पद्धति टिकाऊ एवं लाभकारी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मानी जाती है।

गेहूं+चना फसल में संतुलित पोषण का प्रभाव

चार आर सिद्धांत

संतुलित उर्वरक प्रबंधन के लिए चार आर (4आर) सिद्धांत को अपनाना आवश्यक है:

- सही उर्वरक का चयन
- सही मात्रा
- सही समय
- सही विधि

इन सिद्धांतों का पालन करने से पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ती है, उत्पादन लागत कम होती है तथा पर्यावरणीय प्रदूषण को कम करने में सहायता मिलती है।

संतुलित उर्वरक प्रबंधन वर्तमान की आवश्यकता ही नहीं, बल्कि भविष्य की खाद्य सुरक्षा और मृदा संरक्षण की आधारशिला भी है। मृदा परीक्षण, समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन तथा 4 आर सिद्धांतों को अपनाकर किसान कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी सुनिश्चित कर सकते हैं। इससे पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ती है, उत्पादन लागत में कमी आती है तथा मृदा की उर्वराशक्ति लंबे समय तक बनी रहती है।

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, बढ़ती उत्पादन लागत तथा मृदा की कमजोर होती उर्वराशक्ति जैसी चुनौतियों के बीच संतुलित उर्वरक प्रबंधन का महत्व और भी बढ़ गया है। अत: किसानों, कृषि वैज्ञानिकों तथा प्रसार कार्यकर्ताओं के सामूहिक प्रयासों से वैज्ञानिक एवं मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रबंधन को बढ़ावा देना आवश्यक है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित उर्वरक प्रबंधन ही टिकाऊ कृषि, स्वस्थ मृदा और उच्च उत्पादकता का सशक्त आधार है।

द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्व

कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा सल्फर जैसे द्वितीयक पोषक तत्व तथा जिंक, आयरन, मैंग्नीज, तांबा और बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए कम मात्रा में आवश्यक होते हैं, लेकिन इनका महत्व अत्यधिक होता है। कैल्शियम कोशिका भित्ति के निर्माण और जड़ों के विकास में सहायक होता है, जबकि मैग्नीशियम क्लोरोफिल का प्रमुख घटक होने के कारण प्रकाश संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सल्फर प्रोटीन तथा तेल के निर्माण में आवश्यक होता है। इसी प्रकार, जिंक, आयरन और बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व विभिन्न एंजाइमों की क्रियाशीलता, परागण तथा दानों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वर्तमान समय में अनेक क्षेत्रों में धान, गेहूं तथा मक्का जैसी अनाज फसलों में जिंक और सल्फर की कमी सामान्य रूप से देखी जा रही है, जिसके कारण उत्पादन एवं गुणवत्ता प्रभावित होती है। अत: प्रमुख पोषक तत्वों के साथ-साथ द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की संतुलित पूर्ति पर भी विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

समुद्री शैवाल की खेती से आय के नए स्रोत

अमित सोलंकी, मनोज कुमार सिंह, श्रुति जायसवाल, पवन कुमार वर्मा और **आकांक्षा**

" सीवीड, जिसे हिंदी में समुद्री शैवाल कहा जाता है, समुद्र में प्राकृतिक रूप से उगने वाला एक बहुउपयोगी पौधा है। यह समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को बनाए रखने के साथ-साथ पोषण, कृषि, औषधि, उद्योग और जैव अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में इसकी बढ़ती मांग और व्यावसायिक संभावनाओं को देखते हुए समुद्री शैवाल की खेती को विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इसी दिशा में मत्स्य पालन, पशुपालन एवं डेरी मंत्रालय ने तमिलनाडु में एक सीवीड पार्क स्थापित करने की पहल की है, जिसका उद्देश्य समुद्री शैवाल के उत्पादन, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन और विपणन को बढ़ावा देकर तटीय समुदायों के लिए रोजगार एवं आय के नए अवसर सृजित करना तथा क्षेत्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास को गति देना है। "

सीवीड समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में प्रमुख भूमिका निभाने वाला बिना फूलों वाला पौधा है। इसके पास जड़, तना और पत्तियां नहीं होतीं, फिर भी यह समुद्र में जीवों के लिए आवास और आहार प्रदान करता है। यह पानी के नीचे वन्य पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करता है, जिन्हें 'केल्प फॉरेस्ट' कहा जाता है।

प्रमुख प्रजातियां

ग्रेसिलिरिया एडुलिसः यह प्रजाति खाद्य और औद्योगिक उपयोगों के लिए प्रसिद्ध है। इसका उपयोग मुख्य रूप से अगर-अगर के उत्पादन में होता है।

सस्य विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

समुद्री शैवाल का उत्पादन-एक उभरता उद्यम

ग्रेसिलिरिया क्रैसाः यह प्रजाति अपनी उच्च पोषण सामग्री के लिए जानी जाती है। इसका उपयोग औषधीय और पोषण संबंधी अनुप्रयोगों में किया जाता है।

सरगस्सुम एसपीपीः यह भूरा समुद्री शैवाल है, जिसका उपयोग जैविक खाद, औषधीय उत्पादों तथा कॉस्मेटिक उत्पादों में किया जाता है।

टर्बिनारियाः यह प्रजाति भारी धातुओं को अवशोषित करने की क्षमता के लिए जानी जाती है। इसका उपयोग पर्यावरणीय सफाई और पोषण संबंधी अनुप्रयोगों में किया जाता है।

सीवीड उत्पादन से तटीय समुदायों की आर्थिक समृद्धि

लाभ

पोषण के लिए उपयोगी

सीवीड विटामिन, खनिज तत्त्वों और फाइबर का समृद्ध स्रोत है। इसका उपयोग अनेक खाद्य उत्पादों में किया जाता है तथा यह पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक आहार के रूप में लोकप्रिय हो रहा है।

औषधीय उपयोग

सीवीड में एंटी इंफ्लेमेटरी तथा एंटी माइक्रोबियल गुण पाए जाते हैं, जो इसे औषधीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण बनाते हैं। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, यह कैंसर सहित अनेक गंभीर रोगों के उपचार में सहायक हो सकता है। इसी कारण आयुर्वेद तथा आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों में इसके औषधीय गुणों का व्यापक उपयोग किया जा रहा है।

आर्थिक विकास में सहायक

सीवीड अनेक उद्योगों के लिए एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक कच्चा माल है। इसका उपयोग टूथपेस्ट, फलों की जेली, सौंदर्य प्रसाधनों तथा त्वचा देखभाल उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, यह एक प्रभावी बाध्यकारी (बाइंडिंग) एजेंट के रूप में कार्य करता है, जिससे जैविक एवं प्राकृतिक उत्पादों के निर्माण में इसकी मांग लगातार बढ़ रही है।

पर्यावरणीय महत्व

सीवीड समुद्री पर्यावरण के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह अतिरिक्त पोषक तत्वों को अवशोषित कर समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बनाए रखने में सहायता करता है। साथ ही, यह बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण कर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में योगदान देता है। सीवीड समुद्री जल में उपस्थित विषाक्त भारी धातुओं को भी अवशोषित करता है, जिससे समुद्री पर्यावरण अधिक स्वच्छ और स्वस्थ बना रहता है।

ऑक्सीजन एवं पोषक तत्वों का स्रोत

सीवीड समुद्री जीवों के लिए आहार और ऑक्सीजन का महत्वपूर्ण स्रोत है। यह प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा ऑक्सीजन का उत्पादन करता है तथा समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संभावनाएं

सीवीड आधारित उत्पादों की बढ़ती वैश्विक मांग भारत के लिए निर्यात के नए अवसर प्रदान कर रही है। उन्नत तकनीकों, अनुसंधान तथा नवाचार के माध्यम से इसकी खेती और प्रसंस्करण को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। हरित ऊर्जा के क्षेत्र में जैव ईंधन उत्पादन के लिए सीवीड का उपयोग भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। साथ ही, इसका विस्तार तटीय मछुआरों एवं ग्रामीण समुदायों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाते हुए ग्रामीण विकास को नई दिशा प्रदान कर सकता है।

समुद्री शैवाल से तैयार उच्च मूल्य वाले औद्योगिक उत्पाद

उत्पादन एवं महत्व

सीवीड की खेती समुद्र में समुद्री शैवाल के उत्पादन, प्रबंधन और कटाई की प्रक्रिया है, जिसमें समुद्री संसाधनों का सतत उपयोग किया जाता है। भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से तमिलनाडु, गुजरात, लक्षद्वीप तथा अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह के तटीय क्षेत्रों में की जाती है। सीवीड की खेती न केवल स्थानीय समुदायों की आजीविका को सुदृढ़ बनाती है, बल्कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है।

सीवीड की खेती के अनेक लाभ हैं, जो पर्यावरणीय, आर्थिक तथा सामाजिक तीनों दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

रोजगार के अवसर

यदि भारत के अनन्य आर्थिक क्षेत्र के लगभग 10 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में

सीवीड की खेती की जाए, तो लगभग 5 करोड़ लोगों के लिए रोजगार के अवसर सृजित हो सकते हैं। इससे मछुआरों तथा तटीय ग्रामीण समुदायों की आय और जीवन स्तर में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है।

राष्ट्रीय जीडीपी में योगदान

सीवीड आधारित उद्योग, जैसे खाद्य प्रसंस्करण, सौंदर्य प्रसाधन, औषधि तथा जैव ईंधन उत्पादन, देश की अर्थव्यवस्था को नई गति दे सकते हैं और राष्ट्रीय जीडीपी में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं।

कार्बन न्यूनीकरण

सीवीड बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण कर पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायता करता है। इस प्रकार यह जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने का एक प्रभावी प्राकृतिक उपाय बन सकता है।

जैव ईंधन उत्पादन

सीवीड से जैव ईंधन के उत्पादन की व्यापक संभावनाएं हैं। अनुमान है कि इससे लगभग 6.6 अरब टन जैव ईंधन का उत्पादन संभव है, जो हरित ऊर्जा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

समुद्री उत्पादों में वृद्धि

सीवीड समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को समृद्ध बनाकर मत्स्य उत्पादन सहित अन्य समुद्री संसाधनों की उपलब्धता और गुणवत्ता में वृद्धि करने में सहायक होता है।

महिलाओं के लिए स्वरोजगार के नए अवसर

इस प्रकार, सीवीड की खेती आर्थिक विकास, रोजगार सृजन और पर्यावरण संरक्षण तीनों क्षेत्रों में समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

चुनौतियां

सीवीड की खेती की अपार संभावनाओं के बावजूद इसके विस्तार के मार्ग में अनेक चुनौतियां भी हैं।

प्राकृतिक आपदाएं

समुद्री तूफान, ऊंची लहरें तथा जलवायु परिवर्तन सीवीड की खेती को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकते हैं, जिससे उत्पादन में कमी आ सकती है।

तकनीकी ज्ञान की कमी

तटीय क्षेत्रों के अनेक किसानों और मछुआरों के पास सीवीड की वैज्ञानिक खेती के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण, तकनीकी जानकारी तथा आवश्यक उपकरणों का अभाव है, जिससे उत्पादकता प्रभावित होती है।

पर्यावरणीय प्रभाव

समुद्री प्रदूषण, प्लास्टिक कचरा तथा अन्य अपशिष्ट पदार्थ सीवीड की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं, जिससे इसके उपयोग और बाजार मूल्य में कमी आ सकती है।

विपणन संबंधी समस्याएं

सीवीड के प्रसंस्करण, भंडारण, मूल्य संवर्धन तथा निर्यात से जुड़ी चुनौतियां अभी भी इसके व्यापक व्यावसायिक विस्तार में बाधा बनी हुई हैं।

सीवीड केवल एक समुद्री संसाधन नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण, रोजगार सृजन और आर्थिक विकास का सशक्त माध्यम है। तमिलनाडु में सिंतावित विशेष आर्थिक क्षेत्र तथा सीवीड पार्क जैसी पहलें भारत को इस क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर अग्रणी बनाने की क्षमता रखती हैं।

इसके वैज्ञानिक प्रबंधन, मूल्य संवर्धन और व्यापक उपयोग से न केवल समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण संभव होगा, बल्कि तटीय समुदायों की आय में वृद्धि और देश की आर्थिक समृद्धि को भी नई गति मिलेगी। समुद्री शैवाल की खेती में निवेश, अनुसंधान और जन-जागरूकता बढ़ाकर भारत इस क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम बढ़ा सकता है। ■

पहल

तमिलनाडु में विशेष आर्थिक क्षेत्र

सीवीड की खेती को बढ़ावा देने के लिए तमिलनाडु में एक विशेष आर्थिक क्षेत्र स्थापित करने की योजना बनाई गई है। यह क्षेत्र सीवीड के उत्पादन, प्रसंस्करण और निर्यात को प्रोत्साहन देगा। इस पहल से न केवल समुद्री संसाधनों का सतत उपयोग होगा, बल्कि क्षेत्रीय विकास और रोजगार सृजन में भी सहायता मिलेगी।

सीवीड मिशन

वर्ष 2021 में प्रौद्योगिकी सूचना, पूर्वानुमान और मूल्यांकन परिषद ने सीवीड मिशन शुरू किया था। यह मिशन समुद्री शैवाल के उपयोग से आर्थिक लाभ प्राप्त करने के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण पर भी केंद्रित है।

स्थानीय आजीविका

सीवीड की खेती ग्रामीण मछुआरों और स्थानीय समुदायों के लिए रोजगार के नए अवसर प्रदान करेगी। इससे उनकी आय बढ़ने के साथ-साथ समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण को भी बढ़ावा मिलेगा।

इस प्रकार, सीवीड को एक बहुउद्देश्यीय संसाधन के रूप में मान्यता मिल रही है, जो देश के आर्थिक और पर्यावरणीय विकास के लिए महत्वपूर्ण है।

मधुमक्खियों के संरक्षण में उपयोगी-सूक्ष्म शैवाल

आनंद चौधरी

"धरती पर जीवन की निरंतरता में कुछ जीव ऐसे हैं, जिनका महत्व उनके छोटे आकार से कहीं अधिक है। मधुमक्खियां उन्हीं में से एक हैं। ये केवल शहद बनाने वाली कीट नहीं, बल्कि प्रकृति की सबसे महत्वपूर्ण परागणकर्ता भी हैं। विश्व के लगभग एक-तिहाई खाद्य उत्पादन का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध मधुमक्खियों द्वारा किए जाने वाले परागण से है। फल, सब्जियां, तिलहन, मसाले, मेवे तथा अनेक बागवानी फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता काफी हद तक इन्हीं पर निर्भर करती है। किंतु जलवायु परिवर्तन, कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग, आवास, विनाश तथा पोषण की कमी के कारण विश्वभर में मधुमक्खियों की संख्या लगातार घट रही है, जिससे कृषि और खाद्य सुरक्षा पर भी संकट मंडरा रहा है। इसी चुनौती के समाधान के रूप में प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन और खनिजों से भरपूर सूक्ष्म शैवाल (माइक्रोएल्गी) मधुमक्खियों के लिए एक प्रभावी पूरक आहार साबित हो सकती है।"

मधुमक्खियां फूलों से पराग और मकरंद एकत्र करते समय अनजाने में एक फूल के परागकण दूसरे फूल तक पहुंचाती हैं। इस प्राकृतिक प्रक्रिया को परागण कहा जाता है। परागण के माध्यम से पौधों में फल और बीजों का निर्माण होता है, जिससे फसलों की उपज और गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है।

यदि मधुमक्खियों की संख्या में लगातार कमी आती रही, तो अनेक फल, सब्जी, तिलहन तथा बागवानी फसलों का उत्पादन गंभीर रूप से प्रभावित हो सकता है। इसका सीधा प्रभाव किसानों की आय, जैव विविधता और वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर पड़ेगा। इसलिए मधुमक्खियां केवल शहद उत्पादन तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की आधारशिला और प्रकृति की सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक परागणकर्ता हैं, जिनके बिना टिकाऊ कृषि की कल्पना करना कठिन है। वर्तमान में मधुमक्खियां अनेक पर्यावरणीय और मानवीय चुनौतियों का सामना कर रही हैं, जिनका सीधा प्रभाव उनके स्वास्थ्य, प्रजनन और कॉलोनी की स्थिरता पर पड़ रहा है।

पोषण की कमी

मधुमक्खियां ऊर्जा के लिए पुष्परस तथा प्रोटीन एवं अन्य आवश्यक पोषक तत्वों के लिए परागकण पर निर्भर रहती हैं। किंतु आधुनिक मोनोकल्चर खेती में बड़े क्षेत्रों में केवल एक ही फसल उगाई जाती है, जिससे उन्हें विविध प्रकार के फूल और संतुलित पोषण नहीं मिल पाता।

लाभ

यदि सूक्ष्म शैवाल आधारित पूरक आहार का व्यावसायिक स्तर पर सफल विकास हो जाता है, तो इससे मधुमक्खी पालकों और किसानों दोनों को महत्वपूर्ण लाभ मिल सकते हैं। प्राकृतिक पराग की कमी वाले समय, जैसे सर्दियों, सूखे अथवा पुष्प स्रोतों की अनुपलब्धता के दौरान, यह मधुमक्खियों के लिए संतुलित और पौष्टिक आहार का विकल्प प्रदान कर सकता है। इससे कमजोर कॉलोनियों को अतिरिक्त पोषण मिलेगा, उनका विकास बेहतर होगा तथा उनकी सक्रियता और जीवित रहने की क्षमता में सुधार हो सकता है। स्वस्थ और मजबूत मधुमक्खी कॉलोनियां फसलों में अधिक प्रभावी परागण सुनिश्चित करेंगी, जिससे फल, सब्जी, तिलहन और बागवानी फसलों की उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि होने की संभावना है। इसके परिणामस्वरूप किसानों की आय बढ़ सकती है और मधुमक्खी पालकों को कॉलोनी क्षति तथा आर्थिक नुकसान में कमी लाने में सहायता मिल सकती है। इस प्रकार, सूक्ष्म शैवाल भविष्य में मधुमक्खियों के कृत्रिम आहार का अधिक पोषक, टिकाऊ और प्रभावी विकल्प बनकर कृषि एवं मधुमक्खी पालन दोनों क्षेत्रों को लाभ पहुंचा सकती है।

सहायक कृषि अनुसंधान अधिकारी (पौध व्याधि), कार्यालय कृषि अनुसंधान अधिकारी (वनस्पति), बीज परीक्षण प्रयोगशाला, चित्तौड़गढ़-312025 (राजस्थान)

जलवायु परिवर्तन

बदलते मौसम के कारण फूलों के खिलने का समय प्रभावित हो रहा है। कई बार फूल जल्दी या देर से खिलते हैं, जिससे मधुमक्खियों की आहार आवश्यकता और पुष्प उपलब्धता के बीच असंतुलन उत्पन्न हो जाता है।

कीटनाशकों का प्रभाव

अनेक रासायनिक कीटनाशक मधुमक्खियों की तंत्रिका प्रणाली को प्रभावित करते हैं। इससे उनकी दिशा पहचानने, आहार खोजने और छत्ते तक लौटने की क्षमता कमजोर हो जाती है, जिससे उनकी मृत्यु दर बढ़ सकती है।

परजीवी एवं रोग

वैरोआ माइट्स जैसे परजीवी तथा विभिन्न विषाणु मधुमक्खी कॉलोनियों को कमजोर कर देते हैं। कई क्षेत्रों में कॉलोनियों के बड़े पैमाने पर नष्ट होने का प्रमुख कारण यही है। इसी दिशा में सूक्ष्म शैवाल एक आशाजनक विकल्प के रूप में उभर रही है।

सूक्ष्म शैवाल (माइक्रोएल्गी) अत्यंत सूक्ष्म, जल में पाए जाने वाले प्रकाश संश्लेषी जीव हैं, जो पौधों की भांति सूर्य के प्रकाश की सहायता से अपना आहार बनाते हैं। स्पिरुलिना और क्लोरेला इसके प्रमुख उदाहरण हैं। आकार में अत्यंत छोटे होने के बावजूद ये पोषक तत्वों का समृद्ध स्रोत हैं, इसलिए इन्हें मानव पोषण में भी सुपर फूड के रूप में व्यापक पहचान मिली है।

सूक्ष्म शैवाल में उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल, ओमेगा व अन्य फैटी अम्ल, विटामिन, खनिज तथा शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यही कारण है कि इनका उपयोग पोषण, स्वास्थ्य और जैव प्रौद्योगिकी से जुड़े अनेक क्षेत्रों में बढ़ रहा है।

हाल के वर्षों में वैज्ञानिक यह भी अध्ययन कर रहे हैं कि क्या यही पोषक तत्व मधुमक्खियों के लिए एक प्रभावी पूरक आहार का कार्य कर सकते हैं। प्रारंभिक शोध संकेत देते हैं कि सूक्ष्म शैवाल मधुमक्खियों के पोषण स्तर, रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा कॉलोनी के समग्र स्वास्थ्य में सुधार लाने की क्षमता रखते हैं।

वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि कुछ सूक्ष्म शैवालों की पोषण संरचना मधुमक्खियों के प्राकृतिक परागकण (पोलन) से काफी मिलती-जुलती है। इसलिए, जब प्राकृतिक पोलन की उपलब्धता कम हो, तब सूक्ष्म शैवाल एक प्रभावी पूरक अथवा वैकल्पिक आहार के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं।

विभिन्न शोधों में मधुमक्खियों के आहार में स्पिरुलिना और क्लोरेला जैसे सूक्ष्म शैवालों को शामिल कर उनके प्रभावों का मूल्यांकन किया गया। परिणामों से पता चला कि इससे मधुमक्खियों की पोषण स्थिति में सुधार हुआ, लार्वा का विकास बेहतर हुआ तथा कॉलोनियां अधिक सक्रिय और सुदृढ़ बनी रहीं। इसके अलावा, मधुमक्खियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ने और उनके जीवनकाल पर भी सकारात्मक प्रभाव देखे गए। ये निष्कर्ष दर्शाते हैं कि सूक्ष्म शैवाल केवल वैकल्पिक आहार ही नहीं, बल्कि एक पोषणवर्धक पूरक आहार के रूप में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

पर्यावरण अनुकूल

सूक्ष्म शैवाल केवल मधुमक्खियों के पोषण तक सीमित नहीं हैं, बल्कि पर्यावरणीय दृष्टि से भी एक टिकाऊ और संसाधन कुशल जैविक विकल्प मानी जाती हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनका उत्पादन कम संसाधनों में भी संभव है और इसका पर्यावरण पर अपेक्षाकृत कम प्रभाव पड़ता है।

परागण प्रक्रिया में अहम मधुमक्खियां

सूक्ष्म शैवाल अत्यंत तेजी से बढ़ती हैं, इसलिए कम समय में बड़ी मात्रा में इनका उत्पादन किया जा सकता है। इन्हें उगाने के लिए उपजाऊ कृषि भूमि की आवश्यकता नहीं होती, जिससे खाद्य फसलों के लिए उपलब्ध भूमि पर अतिरिक्त दबाव नहीं पड़ता। नियंत्रित परिस्थितियों में अपेक्षाकृत कम पानी और सीमित संसाधनों के साथ भी इनका उत्पादन संभव है। इसके अतिरिक्त, प्रकाश संश्लेषण के दौरान ये वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करती हैं, जिससे ग्रीनहाउस गैसों के स्तर को कम करने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को सीमित करने में भी योगदान मिल सकता है।

इन्हीं विशेषताओं के कारण सूक्ष्म शैवाल को मधुमक्खियों के लिए पोषण का एक संभावित स्रोत होने के साथ-साथ टिकाऊ कृषि, पर्यावरण संरक्षण और भविष्य की हरित जैव-अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक माना जा रहा है।

भावी परिदृश्य

सूक्ष्म शैवाल के उपयोग पर शोध अभी प्रारंभिक चरण में है, किंतु अब तक प्राप्त परिणाम उत्साहजनक हैं। वैज्ञानिक यह जानने का प्रयास कर रहे हैं कि मधुमक्खियों के लिए कौन-सी सूक्ष्म शैवाल प्रजाति सबसे अधिक उपयुक्त है, इसकी आदर्श मात्रा कितनी होनी चाहिए, कम लागत पर बड़े पैमाने पर इसका उत्पादन कैसे किया जाए तथा विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में इसकी प्रभावशीलता कितनी होगी। इन प्रश्नों के स्पष्ट उत्तर भविष्य के शोधों से प्राप्त होंगे। फिर भी उपलब्ध वैज्ञानिक साक्ष्य यह संकेत देते हैं कि सूक्ष्म शैवाल मधुमक्खियों के पोषण और स्वास्थ्य सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

रोग प्रतिरोधक

हाल के वर्षों में वैज्ञानिकों का ध्यान सूक्ष्म शैवाल के एक और संभावित उपयोग की ओर गया है। अब इनका अध्ययन केवल पोषक पूरक के रूप में ही नहीं, बल्कि खाने योग्य वैक्सीन के वाहक के रूप में भी किया जा रहा है। विशेष रूप से अमेरिका में किए गए शोधों में यह संभावना तलाश की जा रही है कि आनुवंशिक रूप से संवर्धित सूक्ष्म शैवालों के माध्यम से मधुमक्खियों तक ऐसे जैविक अणु पहुंचाए जाएं, जो उन्हें कुछ वायरस और रोगजनकों के विरुद्ध बेहतर प्रतिरक्षा प्रदान कर सकें। यदि यह तकनीक सफल होती है, तो मधुमक्खियों को आहार के साथ ही रोगों से सुरक्षा देने का एक सरल, सुरक्षित और किफायती तरीका विकसित किया जा सकता है। इससे कॉलोनियों में फैलने वाले संक्रमणों को नियंत्रित करने में सहायता मिलेगी तथा अलग से उपचार या दवा की आवश्यकता भी कम हो सकती है।

अगस्त के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह[1]**, अंजली पटेल**[2]**, विनय उपाध्याय**[3]**,**
कपिला शेखावत[1]**, प्रवीण कुमार उपाध्याय**[1] और **आदित्य सिंह**[1]

"भारत में कृषि कार्य ऋतुओं के अनुसार बदलते रहते हैं और अगस्त अर्थात श्रावण-भाद्रपद का महीना किसानों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। यह दक्षिण-पश्चिम मानसून के प्रभाव का समय होता है, जिससे खेतों में पर्याप्त नमी उपलब्ध रहती है। इस दौरान खरीफ फसलें जैसे-धान, मक्का, सोयाबीन, बाजरा, ज्वार, मूंगफली तथा विभिन्न दलहनी फसलें अच्छी वृद्धि की अवस्था में होती हैं। इसलिए अगस्त में फसलों की समुचित देखभाल, सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण तथा कीट एवं रोग प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होता है। उचित समय पर बुआई, फसलों की क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई, बूंद-बूंद सिंचाई प्रणाली का उपयोग, कम पानी में फसल प्रबंधन हेतु पूसा हाइड्रोजेल का प्रयोग तथा वाष्पीकरण कम करने के लिए पलवार (मल्च) का उपयोग जैसी कृषि तकनीकें वर्षा आधारित क्षेत्रों में फसल उत्पादकता बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती हैं। यदि किसान वैज्ञानिक एवं आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाएं, तो वे बेहतर उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। अगस्त में किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।"

अगस्त का महीना कृषि गतिविधियों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इस समय मौसम की अनुकूल परिस्थितियों के कारण फसलों की वृद्धि तेजी से होती है, साथ ही कीट, रोग एवं खरपतवार का प्रकोप भी बढ़ सकता है। समय पर अपनाई गई वैज्ञानिक कृषि तकनीकें बेहतर उत्पादन, गुणवत्तापूर्ण उपज तथा अधिक लाभ सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

इस अवधि में पशुपालन, बागवानी तथा सब्जी उत्पादन से जुड़े कार्य भी विशेष महत्व रखते हैं। बागवानी फसलों में अमरूद, आम, कटहल, आंवला, पपीता, केला, नीबू, बेर, जामुन तथा लीची के बागों की नियमित देखभाल आवश्यक होती है।

वहीं सब्जी फसलों में कद्दूवर्गीय सब्जियां, भिंडी, बैंगन, मिर्च, परवल, टमाटर, हरी प्याज, गाजर, बेबीकॉर्न, ग्वार, पालक, अगेती मूली, फूलगोभी तथा बंदगोभी की खेती से संबंधित कार्य समय पर किए जाने चाहिए।

[1]सस्य विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; [2]सस्य विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर-492012 (छत्तीसगढ़); [3]सस्य विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

धान

खरपतवार नियंत्रण

धान की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खरपतवारों का समय पर नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। खरपतवार पोषक तत्वों, नमी, प्रकाश एवं स्थान के लिए मुख्य फसल से प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि और उत्पादन प्रभावित होता है। इसलिए रोपाई के 20-40 दिनों के भीतर खरपतवारों का प्रभावी

नियंत्रण अवश्य कर लेना चाहिए। आवश्यकता के अनुसार निराई-गुड़ाई अथवा अनुशंसित शाकनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है।

जल प्रबंधन

धान की फसल के लिए सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होना आवश्यक है। जल की क्रांतिक अवस्थाओं, जैसे-कल्ले फूटते समय, फूल निकलते समय, बाली निकलते समय तथा दाना भरते समय खेत में 5-6 सें.मी. जल भराव रहना लाभकारी पाया गया है।

अनुसंधानों के अनुसार खेत में लगातार पानी भरा रखने के बजाय, खेत की सतह से पानी अदृश्य होने के एक दिन बाद 5-7 सें.मी. सिंचाई करना अधिक उपयुक्त होता है। सामान्यतः खेत में 3-4 सें.मी. जल स्तर बनाए रखना चाहिए। इससे फॉस्फोरस, मैंग्नीज तथा लौह जैसे पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है और खरपतवारों का प्रकोप भी कम होता है।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कल्ले फूटने की अवस्था में लंबे समय तक 5 सें.मी. से अधिक पानी खेत में भरा रहना हानिकारक हो सकता है। अतः जिन क्षेत्रों में पानी अधिक समय तक ठहरता हो, वहां उचित जल निकासी की व्यवस्था अवश्य करें।

पोषक तत्व प्रबंधन (टॉप ड्रेसिंग)

धान की फसल में रोपाई के 25-30 दिनों बाद कल्ले निकलने की अवस्था में अधिक उपज देने वाली किस्मों में 65 कि.ग्रा. यूरिया (30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) तथा सुगंधित किस्मों में 33 कि.ग्रा. यूरिया (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) प्रति हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें। नाइट्रोजन की इतनी ही मात्रा की दूसरी एवं अंतिम टॉप ड्रेसिंग रोपाई के 50-55 दिनों बाद पुष्पण के समय करें। यदि खेत में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई दें, तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के साथ 0.25 प्रतिशत बुझे हुए चूने का घोल मिलाकर 15-20 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें। जिन क्षेत्रों में धान की सीधी बुआई की जाती है, वहां लौह तत्व की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट का घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें।

कीट प्रबंधन

धान की फसल में विभिन्न कीट उपज के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं, जिससे चावल की स्थानीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार में मांग घटती है और किसानों को आर्थिक हानि होती है। प्रमुख कीट एवं उनके नियंत्रण के उपाय निम्न हैं।

धान में पत्ती लपेटक

लक्षणः अगस्त से अक्टूबर के बीच इस कीट का प्रकोप अधिक होता है। इसकी सुंडियां कोमल पत्तियों के किनारों को मोड़कर सुरंग जैसी संरचना बना लेती हैं और उसी के भीतर रहकर पत्तियों को खाती हैं। परिणामस्वरूप पत्तियों का हरा रंग उड़ जाता है तथा वे सूखने लगती हैं। इसके लिए प्रकाश प्रपंच (लाइट ट्रैप) का प्रयोग करें। रोपाई के 30 दिनों बाद ट्राइकोग्रामा काइलोनिस (ट्राइकोकार्ड) 1-1.5 लाख/हैक्टर की दर से प्रति सप्ताह 3-4 सप्ताह तक छोड़ें। आवश्यकता होने पर मोनोक्रोटोफॉस (36 एस.एल.) 1.4 लीटर को 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2.5 मि.ली./लीटर, क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 2.5 मि.ली./लीटर, कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 50 एस.पी. 1 ग्राम/लीटर अथवा फ्लूबेंडियामाइड 39.35 एस.सी. 1 मि.ली./5 लीटर पानी का छिड़काव करें। आवश्यकता पड़ने पर कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी का 25 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

ग्रास हॉपर

लक्षणः इस कीट के शिशु तथा वयस्क दोनों ही पत्तियों को इस प्रकार खाते हैं, मानो उन्हें किसी पशु ने चर लिया हो।

नियंत्रणः इस कीट की वर्ष में केवल एक ही पीढ़ी होती है, इसलिए गर्मियों में

ग्रास हॉपर

सारणीः धान की फसल में रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु अनुशंसित शाकनाशी

शाकनाशी	मात्रा (ग्रा./है.)	प्रयोग का समय	नियंत्रित खरपतवार
बिस्पाइरीबैक सोडियम (नोमिनी गोल्ड)	20-30	रोपाई/बुआई के 15-25 दिनों बाद	मोथा तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
पायराजोसल्फ्यूरॉन एथाइल 10 डब्ल्यू.पी.	200	रोपाई/बुआई के 3 दिनों बाद	घास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
पेण्डीमेथीलिन	1000-1500	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास, मोथा एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
प्रेटिलाक्लोर	500-1000	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास, मोथा एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
ब्यूटाक्लोर	1500-2000	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास कुल के खरपतवार
एनिलोफॉस	500-600	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास एवं मोथा कुल के खरपतवार
बेंथियोकार्ब	1000-1500	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास कुल के खरपतवार
ऑक्साडायजॉन	750-1000	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास, मोथा एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
ऑक्सीफ्लोरफेन	150-250	रोपाई/बुआई के 3-4 दिनों बाद	घास, मोथा एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
क्लोरिम्यूरॉन+मैटसल्फ्यूरॉन	20	रोपाई/बुआई के 25-30 दिनों बाद	चौड़ी पत्ती वाले एवं मोथा कुल के खरपतवार
फेनॉक्साप्रॉप-पी-एथाइल	60-70	रोपाई/बुआई के 20-25 दिनों बाद	संकरी पत्ती वाले खरपतवार, विशेषकर सांवा
इथॉक्सीसल्फ्यूरॉन 15 प्रतिशत डब्ल्यू.डी.जी.	100	रोपाई/बुआई के 20-25 दिनों बाद	मोथा कुल के खरपतवार

तना छेदक

इस कीट की सुंडियां ही फसल को क्षति पहुंचाती हैं। इनका रंग धारीदार गुलाबी, पीला अथवा सफेद होता है। प्रारंभिक अवस्था में इनके प्रकोप से पौधों का मुख्य तना सूख जाता है, जिसे डेड हार्ट कहते हैं। दाना बनने की अवस्था में बालियां सफेद एवं सूखी दिखाई देती हैं, जिसे व्हाइट हेड कहा जाता है।

नियंत्रणः तना छेदक की निगरानी के लिए प्रकाश प्रपंच का उपयोग करें। रोपाई के 30 दिनों बाद ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम (ट्राइकोकार्ड) 1-1.5 लाख/हैक्टर की दर से 2-6 सप्ताह तक प्रति सप्ताह छोड़ें। आवश्यकता होने पर फॉस्फामिडॉन (85 एस.एल.) 590 मि.ली./हैक्टर, मोनोक्रोटोफॉस (36 एस.एल.) 1.5 लीटर/हैक्टर अथवा क्लोरोपाइरीफॉस (20 ई.सी.) 2.5 लीटर/हैक्टर को 500-700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त कार्बोफ्यूरॉन 3 जी, कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी अथवा फिप्रोनिल 0.3 जी का 25 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग करें या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर अथवा कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 50 एस.पी. 1 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें।

धान के खेतों की मेड़ों की खुरचाई करें, जिससे इसके अंडे नष्ट हो जाएं और प्रकोप कम हो सके। आवश्यकता होने पर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 2.5 मि.ली./लीटर अथवा क्विनालफॉस 25 ई.सी. 3 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें। वैकल्पिक रूप से कार्बारिल अथवा मिथाइल पैराथियॉन पाउडर का 25-30 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से भुरकाव भी किया जा सकता है।

फुदका कीट

लक्षणः फुदका भूरे, काले एवं सफेद रंग के छोटे-छोटे कीट होते हैं। इनके शिशु एवं वयस्क दोनों ही पौधों के तने तथा पर्णच्छद से रस चूसकर फसल को क्षति पहुंचाते हैं। ये मुख्यतः तनों के पास पाए जाते हैं तथा पत्तियों पर सामान्यतः दिखाई नहीं देते। इनके अधिक प्रकोप से हरी-भरी दिखाई देने वाली फसल अचानक झुलस जाती है।

नियंत्रणः इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली./3 लीटर पानी या थायोमेथोक्साम 25 डब्ल्यू.जी. 1 ग्राम/5 लीटर पानी या बीपीएमसी 50 ई.सी. 1 मि.ली./लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम/लीटर अथवा बुप्रोफेजिन 25 एस.सी. 1 मि.ली./लीटर पानी का छिड़काव करें। छिड़काव करते समय नोजल को पौधों के तनों की ओर रखें। आवश्यकता होने पर कार्बोफ्यूरॉन 3 जी. या फिप्रोनिल 0.3 जी. का 25 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

सैनिक कीट

लक्षणः इस कीट की केवल सुंडियां ही फसल को नुकसान पहुंचाती हैं, जबकि पतंगे फूलों का रस चूसते हैं। सुंडियां नर्सरी में पौधों को इस प्रकार कुतरकर खाती हैं, मानो उन्हें किसी पशु ने चर लिया हो। खेत में यह कीट पत्तियों की मध्य शिरा को छोड़कर शेष पूरा भाग खा जाता है।

नियंत्रणः प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर कीटों को आकर्षित कर नष्ट करें। आवश्यकता होने पर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 2.5 मि.ली./लीटर अथवा क्विनालफॉस 25 ई.सी. 3 मि.ली./लीटर पानी का छिड़काव करें। वैकल्पिक रूप से कार्बेरिल अथवा मैलाथियॉन पाउडर का 25-30 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से भुरकाव भी किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन

धान में कवकजनित रोगों की संख्या लगभग 30 है। आर्थिक क्षति की दृष्टि से वर्तमान में हमारे देश में मुख्यतः ब्लास्ट, ब्राउन स्पॉट, स्टेम रॉट, शीथ ब्लाइट तथा फुटरॉट प्रमुख रोग हैं।

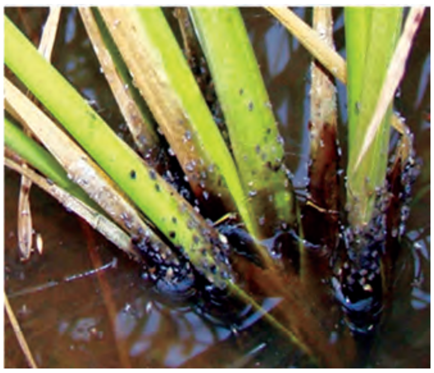

फुदका कीट

झुलसा या पर्ण अंगमारी रोग

यह रोग जीवाणुजनित है और पौधों की छोटी अवस्था से लेकर परिपक्व अवस्था तक किसी भी समय हो सकता है। इसमें पत्तियों के किनारे ऊपरी सिरे से मध्य भाग की ओर सूखने लगते हैं। सूखी पीली पत्तियों पर राख

ब्लास्ट या झोंका रोग

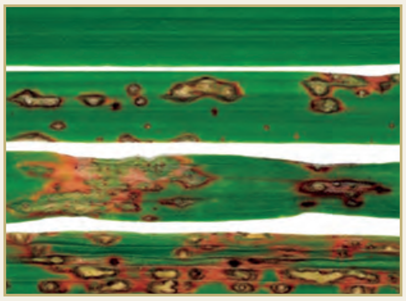

यह रोग फफूंदजनित है, जो पौधे के सभी भागों को प्रभावित करता है। इसकी प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जिनका किनारा कत्थई तथा मध्य भाग राख के रंग का होता है। रोग बढ़ने पर बाली आधार से मुड़कर लटक जाती है तथा दानों का भराव पूरा नहीं हो पाता। देर से रोपाई करने पर इस रोग के प्रकोप की आशंका अधिक रहती है।

नियंत्रणः इसके लिए बीजों का कार्बेण्डाजिम एवं थीरम (1:1) 3 ग्राम/कि.ग्रा. अथवा फंगोरिन 6 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करें। रोग के प्रकोप पर कार्बेण्डाजिम (50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 500 ग्राम, ट्राइसायक्लेजोल 500 ग्राम, एडीफेनफॉस (50 प्रतिशत ई.सी.) 500 मि.ली., हेक्साकोनाजोल (5 प्रतिशत ई.सी.) 1.0 लीटर, मैंकोजेब (75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 2.0 कि.ग्रा., जिनेब (75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 2.0 कि.ग्रा., मैंकोजेब (63 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 750 ग्राम अथवा आइसोप्रोथियोलेन (40 प्रतिशत ई.सी.) 750 मि.ली. दवा को 500-750 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें। कार्बेण्डाजिम का 0.1 प्रतिशत घोल कल्ले फूटने की अवस्था में, दूसरा बालियां निकलने के समय तथा तीसरा छिड़काव ग्रीवा संक्रमण की रोकथाम के लिए करें।

झुलसा या जीवाणु पर्ण अंगमारी रोग

के रंग के चकत्ते दिखाई देते हैं। पत्तियों पर जीवाणु के रिसाव के कारण छोटी-छोटी बूंदें बनती हैं तथा पौधे शिथिल हो जाते हैं। अंततः बालियां दाना रहित रह जाती हैं।

नियंत्रणः रोग दिखाई देने पर नाइट्रोजन का प्रयोग कम करें तथा संक्रमित खेत का पानी दूसरे खेत में न जाने दें। 74 ग्राम एग्रीमाइसिन-100 तथा 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (फाइटोलान/ब्लाइटॉक्स-50/क्यूप्राविट) को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर 3-4 छिड़काव करें।

इसके अतिरिक्त 15 ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट (90 प्रतिशत) अथवा 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन या टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड (10 प्रतिशत) को 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) के साथ मिलाकर 500-750 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर 10-12 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें। रोग से बचाव के लिए अजय, आईआर-42, आईआर-64 तथा स्वर्णा जैसी रोग प्रतिरोधी किस्मों की खेती सर्वोत्तम उपाय है।

बकानी रोग

इस रोग में प्रारंभिक पत्तियां दुर्बल तथा असामान्य रूप से लंबी हो जाती हैं। फसल की परिपक्वता पर संक्रमित पौधे सामान्य पौधों की अपेक्षा अधिक ऊंचे, हल्के हरे रंग के छत्रयुक्त तथा लंबी टिलर्स वाले दिखाई देते

बकानी रोग

हैं। साथ ही टिलर्स की संख्या कम होती है और कुछ सप्ताह में नीचे से ऊपर की ओर एक-एक कर सभी पत्तियां सूख जाती हैं। संक्रमित पौधों की जड़ें सड़कर काली हो जाती हैं तथा उनमें दुर्गंध आने लगती है।

नियंत्रणः इस रोग की रोकथाम के लिए कवकनाशियों से बीजोपचार करें। कार्बेण्डाजिम के 0.1 प्रतिशत (1 ग्राम/लीटर पानी) घोल में बीजों को 24 घंटे तक भिगोकर अंकुरित करें तथा नर्सरी में बुआई करें। रोपाई से पूर्व पौधों को 0.1 प्रतिशत कार्बेण्डाजिम के घोल में 12 घंटे तक उपचारित करना भी प्रभावी पाया गया है।

खैरा रोग

यह रोग जिंक की कमी के कारण होता है। इसकी प्रारंभिक अवस्था में निचली पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं। बाद में पत्तियों पर कत्थई रंग के छोटे-छोटे छिटकवां धब्बे उभर आते हैं तथा पौधों की वृद्धि रुक जाती है।

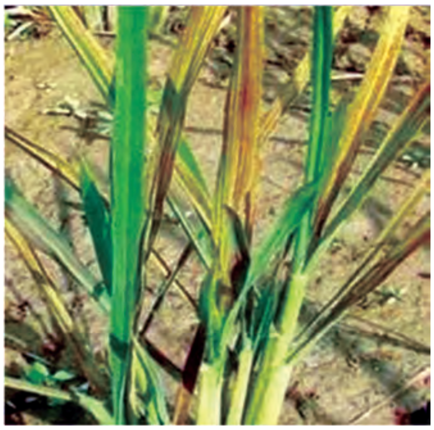

खैरा रोग

नियंत्रणः रोकथाम के लिए रोपाई से पूर्व खेत की तैयारी के समय 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट तथा 2.5 कि.ग्रा. चूने को 600-700 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें।

पत्ती झुलसा रोग

यह रोग पौधे की प्रारंभिक अवस्था से लेकर परिपक्वता तक किसी भी समय हो सकता है। इसमें पत्तियों के किनारे ऊपरी भाग से मध्य भाग की ओर सूखने लगते हैं। सूखी पीली पत्तियों पर राख के रंग के चकत्ते दिखाई देते हैं तथा अंततः बालियां दाना रहित रह जाती हैं।

नियंत्रणः रोग के प्रकोप पर नाइट्रोजन की मात्रा कम कर दें। नियंत्रण के लिए 74 ग्राम एग्रीमाइसिन-100 तथा 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (फाइटोलान/

पत्ती झुलसा रोग

ब्लाइटॉक्स-50/क्यूप्राविट) को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर 3-4 छिड़काव करें। साथ ही स्ट्रेप्टोमाइसिन/एग्रीमाइसिन से बीजोपचार कर बुआई करें।

गुतान झुलसा रोग

यह फफूंदजनित रोग है। इसमें पत्ती के शीथ पर 2-3 सें.मी. लंबे हरे से भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में भूसे के रंग के हो जाते हैं। धब्बों के चारों ओर बैंगनी रंग की पतली धारी दिखाई देती है।

नियंत्रणः इसकी रोकथाम के लिए कार्बेण्डाजिम (50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 500 ग्राम, थायोफिनेट मिथाइल (70 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 1.0 कि.ग्रा., कार्बेण्डाजिम (12 प्रतिशत)+मैंकोजेब (63 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) 750 ग्राम, प्रोपिकोनाजोल (25 प्रतिशत ई.सी.) 500 मि.ली. अथवा हेक्साकोनाजोल (5 प्रतिशत ई.सी.) 1.0 लीटर दवा को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर पर्णीय छिड़काव करें। ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. का 5-10 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर भी पर्णीय छिड़काव किया

गुतान झुलसा रोग

जा सकता है। रोग की रोकथाम के लिए कृष्णा, सी.आर. 44-11, साकेत-1, पंकज तथा मानसरोवर जैसी रोगरोधी किस्मों का चयन करें।

मक्का

जल प्रबंधन

मक्का में बाली बनने के समय पर्याप्त नमी होना आवश्यक है, अन्यथा उपज में 50 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। सामान्यत: वर्षा की कमी होने पर फसल की क्रांतिक अवस्थाओं, जैसे-घुटने तक की ऊंचाई, नर मंजरी निकलने तथा दाना बनने की अवस्था पर एक या दो सिंचाइयां अवश्य करें, ताकि उपज में कमी न हो। सिंचाई के साथ-साथ खेत में जल निकास की समुचित व्यवस्था भी आवश्यक है। यदि मक्का मेड़ों पर बोई गई है, तो खेत के अंत में अतिरिक्त पानी की निकासी का उचित प्रबंध होना चाहिए।

नाइट्रोजन की टॉप ड्रेसिंग

मक्का में बुआई के 40-45 दिनों बाद, नर मंजरी निकलने की अवस्था में दूसरी एवं अंतिम टॉप ड्रेसिंग के रूप में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

खरपतवार प्रबंधन

खरीफ मौसम में खरपतवारों का प्रकोप अधिक होता है, जिससे उपज में 50-60 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। इसलिए मक्का के खेत को प्रारंभिक 45 दिनों तक खरपतवारमुक्त रखना चाहिए। खरपतवार प्रबंधन के लिए 2-3 बार निराई-गुड़ाई खुरपी, हैंड हो अथवा हस्त एवं शक्ति चालित यंत्रों से करें। इससे मिट्टी की पपड़ी टूट जाती है तथा पौधों की जड़ों को पर्याप्त वायु संचार मिलने से उनकी वृद्धि अच्छी होती है। रासायनिक नियंत्रण हेतु एट्राजिन 1.0-1.5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुआई के बाद, परंतु अंकुरण से पहले छिड़काव करें।

ज्वार

थिनिंग एवं पोषक तत्व प्रबंधन

ज्वार की फसल में विरलीकरण (थिनिंग) कर पंक्तियों में पौधे से पौधे की दूरी 15-20 सें.मी. रखें। विरलीकरण के बाद उन्नत एवं संकर किस्मों में बुआई के 30-35 दिनों बाद 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग करें। असिंचित दशा में 2 प्रतिशत यूरिया का घोल बनाकर खड़ी फसल पर छिड़काव करना लाभकारी पाया गया है।

जल प्रबंधन

ज्वार की फसल में पौधों की वृद्धि, पुष्पण एवं बाली निकलने तथा दाना बनने की अवस्थाएं सिंचाई की क्रांतिक अवस्थाएं हैं। इन अवस्थाओं में मृदा में पर्याप्त नमी बनाए रखना अच्छी उपज के लिए अत्यंत आवश्यक है।

खरपतवार प्रबंधन

बुआई के तुरंत बाद एट्राजिन 0.75-1.0 कि.ग्रा. को 700-800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। यदि इसके बाद भी खरपतवार उग आएं, तो बुआई के 20-25 दिनों बाद निराई-गुड़ाई करें। इससे खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ भूमि में वायु संचार बढ़ता है तथा नमी भी सुरक्षित रहती है।

पौध संरक्षण

तना मक्खी ज्वार का प्रमुख कीट है। इसका प्रकोप अंकुरण के लगभग 7-30 दिनों तक रहता है। इसकी इल्लियां उगते हुए पौधों की गोफ को काट देती हैं, जिससे प्रारंभिक अवस्था में ही पौधे सूख जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए फोरेट 10 जी अथवा कार्बोफ्यूरॉन 3 जी का 20 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुआई के समय कूड़ों में प्रयोग करें।

संकर मक्का की नई प्रजाति-पूसा जवाहर संकर मक्का-2

पौध संरक्षण

मक्का में मेडिस टर्सीकम लीफ ब्लाइट, डाउनी मिल्ड्यू आदि रोग कभी-कभी दिखाई देते हैं। इनका प्रकोप देर से बोई गई फसल में अधिक होता है। जीवाणुजनित तना विगलन तथा पाइथियम वृंत गलन रोग पुष्पण के समय जलभराव की स्थिति में पाए जाते हैं। इसी प्रकार पुष्पणोत्तर अवस्था में वृंत गलन के लक्षण भी दिखाई देते हैं।

इन रोगों की रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्मों की समय पर बुआई करें। लीफ ब्लाइट के नियंत्रण हेतु जिनेब 2.5 कि.ग्रा./हैक्टर को 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

यदि रोग का प्रकोप बना रहे, तो 10-15 दिनों के अंतराल पर दूसरा छिड़काव भी करें। पत्ती लपेटक कीट के नियंत्रण के लिए क्लोरोपाइरीफॉस 1.0 मि.ली./लीटर पानी या इमामेक्टिन बेंजोएट 1.0 मि.ली. दवा को 4.0 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

मूंग, उड़द एवं अरहर

बुआई

मूंग एवं उड़द की कम अवधि में पकने वाली किस्मों की बुआई जुलाई के अंतिम सप्ताह से अगस्त के तीसरे सप्ताह तक करनी चाहिए। बुआई कूड़ों में हल के पीछे करें। मूंग के लिए कूड़ से कूड़ की दूरी 30-35 सें.मी. तथा उड़द के लिए 30-45 सें.मी. रखें। बुआई के तीसरे सप्ताह में घने पौधों का विरलीकरण कर पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. कर दें।

पोषक तत्व प्रबंधन

यदि मृदा परीक्षण नहीं किया गया है, तो बुआई के समय कूड़ों में 10-15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

जल प्रबंधन

मूंग, उड़द एवं अरहर में फूल आने की अवस्था पर मिट्टी में हल्की नमी बनाए रखें। इससे फूलों का झड़ना कम होता है, फलियां अधिक लगती हैं तथा दाने मोटे एवं स्वस्थ बनते हैं। ध्यान रखें कि वर्षा का पानी खेत में एकत्र न होने पाए।

खरपतवार प्रबंधन

बुआई के प्रारंभिक 4-5 सप्ताह खरपतवार प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से क्रांतिक अवस्था होती है। पहली सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करने से खरपतवार नष्ट होने के साथ-साथ भूमि में वायु संचार भी बढ़ता है, जिससे मूल ग्रंथियों में सक्रिय जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण में सहायता करते हैं।

चौड़ी पत्ती एवं घास कुल के खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण हेतु पेण्डीमेथीलिन (30 ई.सी.) 3.3 लीटर, एलाक्लोर 4.0 लीटर अथवा फ्लूक्लोरालिन (45 ई.सी.) 2.2 लीटर को 800 लीटर पानी में घोलकर बुआई के तुरंत बाद अथवा अंकुरण से पहले छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बुआई के 15-20 दिनों के भीतर कसोले से निराई-गुड़ाई कर खरपतवारों को नष्ट कर दें।

बाजरा

बुआई

यदि बुआई में विलंब हो गया हो, तो बाजरा की बुआई इस माह के प्रथम पखवाड़े तक अवश्य पूरी कर लें।

थिनिंग एवं पोषक तत्व प्रबंधन

बुआई के 15-20 दिनों बाद विरलीकरण कर कमजोर पौधों को निकाल दें तथा पंक्तियों में पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. रखें। संकर एवं उन्नत किस्मों में 80-100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें।

जल प्रबंधन

वर्षा न होने की स्थिति में 2-3 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। पौधों में फुटान, बालियां निकलने तथा दाना बनने की अवस्था में नमी की कमी नहीं होने दें। बाजरा जलभराव के प्रति संवेदनशील फसल है, इसलिए खेत में पानी एकत्र न होने पाए।

खरपतवार नियंत्रण

इसके लिए एट्राजिन 1.0 कि.ग्रा./हैक्टर को 500-600 लीटर पानी में घोलकर बुआई के बाद तथा अंकुरण से पूर्व छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बुआई के 20-40 दिनों के भीतर एक बार कसौला अथवा खुरपी से निराई-गुड़ाई कर खरपतवार निकाल दें।

पौध संरक्षण

तना छेदक कीट के नियंत्रण के लिए कार्बेरिल 2.5 मि.ली./लीटर दवा का घोल 500 लीटर पानी में बनाकर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त लिन्डेन 6 प्रतिशत ग्रेन्यूल अथवा कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत ग्रेन्यूल का 20 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग किया जा सकता है। प्रति हैक्टर 8 ट्राइकोकार्ड लगाने से भी इस कीट का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। आवश्यकता होने पर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. की 20 मि.ली. दवा प्रति नाली की दर से 15-20 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

मूंगफली

जल प्रबंधन

मूंगफली की फसल में बुआई के 35-40 दिनों तक पुष्पण से पेगिंग बनती है। इस समय पानी की कमी होने पर मूंगफली की उत्पादकता काफी कम हो जाती है। अत: यदि वर्षा न हो, तो सिंचाई की व्यवस्था अवश्य करें।

पोषक तत्व प्रबंधन

इस समय यदि सूक्ष्म पोषक तत्व, जैसे बोरॉन की कमी दिखाई दे, तो 0.2 प्रतिशत बोरेक्स के घोल का प्रयोग करें। इसी प्रकार जिंक की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट तथा 0.25 प्रतिशत चूने के घोल का प्रयोग करें। मूंगफली की फसल में बुआई के 40 दिनों बाद 0.7 ग्राम इंडोल एसिटिक एसिड को 7 मि.ली. एल्कोहल में घोलकर 100 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इसके एक सप्ताह बाद 6 मि.ली. इथरेल (40 प्रतिशत) को 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से मूंगफली की पैदावार में 17-27 प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है।

पौध संरक्षण

कॉलर रॉट से बचाव के लिए कार्बेण्डाजिम अथवा मैंकोजेब का प्रयोग

करें। टिक्का रोग की रोकथाम के लिए खड़ी फसल पर जिंक मैंग्नीज कार्बामेट 2.0 कि.ग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें।

तिल

बुआई तथा जल प्रबंधन

मानसून में देरी होने अथवा खेत खाली होने की दशा में अगस्त माह में तिल की अल्पावधि प्रजातियों की बुआई कर सकते हैं। खरीफ की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। ध्यान रहे कि तिल में पुष्पण एवं फली में बीज भरने की अवस्था में मृदा में नमी की कमी न हो। इन अवस्थाओं में नमी की कमी होने पर फसल की सिंचाई अवश्य करें। खरीफ मौसम में आवश्यकतानुसार जल निकासी तथा नमी संरक्षण के उचित उपाय करें।

खरपतवार नियंत्रण

सामान्यत: दो निराई-गुड़ाई करने से खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। पहली निराई-गुड़ाई बुआई के 15-20 दिनों के भीतर तथा दूसरी बुआई के 35-40 दिनों के भीतर करनी चाहिए। दूसरी निराई-गुड़ाई के समय नाइट्रोजन की शेष मात्रा का भी प्रयोग करें। तिल में फ्लूक्लोरालिन सक्रिय तत्व 1.0 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से 400-500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त एलाक्लोर (1.75 कि.ग्रा.) अथवा पेण्डीमेथीलिन (1.0 कि.ग्रा.) के प्रयोग से भी खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

मूंगफली की स्वस्थ उपज

पौध संरक्षण

फाइलोडी रोग माइकोप्लाज्मा के कारण होता है, जिसका वाहक फुदका कीट है। इस रोग में पौधों का पुष्पक्रम पत्तियों के विकृत रूप में बदलकर गुच्छेदार हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए तिल की बुआई समय से पहले न करें। बुआई के समय कूड़ों में फोरेट 10 जी का 15 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग करें तथा मिथाइल-ओ-डेमेटॉन 25 ई.सी. का 1.0 लीटर/हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

तिल

गन्ना

जल प्रबंधन

वर्षा न होने पर 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। खेत में जलभराव न होने दें।

पौधों को सहारा देना

वर्षा प्रारंभ होते ही पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। अगस्त में गन्ने की बंधाई अवश्य करें, ताकि फसल गिरने से बचे और उपज तथा शर्करा की मात्रा प्रभावित न हो।

खरपतवार नियंत्रण

अगस्त में आइपोमिया (बेल) जैसे खरपतवारों को उखाड़कर नष्ट करें। आवश्यकता होने पर मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 4 ग्राम/हैक्टर को 500-600 लीटर पानी में घोलकर छोटे खरपतवारों पर छिड़काव करें।

पौध संरक्षण

अधिक नमी के कारण इस माह कीट एवं रोगों का प्रकोप बढ़ सकता है। इसके लिए नियमित निगरानी रखें।

पायरिला कीट

शिशु एवं वयस्क पत्तियों का रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। अंड समूह नष्ट करें तथा परजीवी कीट एपीरिकेनिया मेलोनोल्यूका का संरक्षण करें। आवश्यकता होने पर क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2.0 लीटर, डाइक्लोरोवॉस 76 ई.सी. 375 मि.ली. अथवा क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 1.5 लीटर/हैक्टर का 600-800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

गुरदासपुर बेधक

सुंडी गन्ने की पोरी में प्रवेश कर तना खोखला कर देती है। सूखी पत्तियां हटाएं, ट्राइकोग्रामा काइलोनिस के 10 कार्ड/हैक्टर

गन्ना

का 15 दिनों के अंतराल पर प्रयोग करें। आवश्यकता होने पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. 2.0 लीटर या क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 1-1.5 लीटर/हैक्टर का छिड़काव करें। कार्बोफ्यूरॉन 3 जी अथवा फोरेट 10 जी 30 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

जड़ बेधक

सुंडियां गन्ने के आधार में छेद कर डेड हार्ट बनाती हैं। प्रभावित तनों एवं अंड समूहों को नष्ट करें। पेड़ी फसल से बचें तथा आवश्यकता होने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 350 मि.ली., क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. 1.5 लीटर अथवा फेनवेलरेट 0.4 प्रतिशत पाउडर 25 कि.ग्रा./हैक्टर का प्रयोग करें।

पत्ती की लाल धारी रोग

रोगग्रस्त पत्तियों पर लाल धारियां बनती हैं तथा तना चीरने पर गूदा लाल एवं सिरके जैसी गंधयुक्त दिखाई देता है। रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करें, स्वस्थ बीज लें तथा बीज का आर्द्र गर्म वायु उपचार करें। ट्राइकोडर्मा 2.5 कि.ग्रा. या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 2.5 कि.ग्रा./हैक्टर को गोबर की खाद में मिलाकर प्रयोग करें।

कपास

कटाई-छंटाई

अधिक एवं असामयिक वर्षा से पौधों की ऊंचाई 1.5 मीटर से अधिक होने पर उपज प्रभावित हो सकती है। इसलिए मुख्य तने की 1.5 मीटर से ऊपर की शाखाओं की सिकेटियर (कैंची) से छंटाई कर दें। इससे कीटनाशकों के छिड़काव में भी सुविधा रहती है। देसी कपास में अगस्त के प्रथम पखवाड़े में निकल रहे फूटों को काट दें, जिससे पैदावार बढ़ती है। फूल आने पर अगस्त के अंत अथवा सितंबर के प्रारंभ में नेप्थलीन एसिटिक एसिड 70 सी.सी. का छिड़काव करें, जिससे फूल एवं टिंडे झड़ने कम होते हैं तथा उपज बढ़ती है।

टॉप ड्रेसिंग

फूल आने की अवस्था में नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा दें। संकर कपास में लगभग आधा बैग तथा अमेरिकन कपास में लगभग दो-तिहाई बैग यूरिया पर्याप्त रहता है। नाइट्रोजन देने से पहले खेत में पर्याप्त नमी हो, लेकिन जलभराव न हो। वर्षा के बाद अतिरिक्त पानी की निकासी करें। फूल आने के समय नमी की कमी होने पर फूल एवं टिंडे झड़ जाते हैं और उपज घटती है। लगभग एक-तिहाई टिंडे खुलने पर अंतिम सिंचाई करें तथा इसके बाद सिंचाई न करें।

पौध संरक्षण

रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग केवल आर्थिक क्षति स्तर पर ही करें। अगस्त माह में निम्न रोग एवं कीटों का प्रकोप अधिक रहता है।

मूल विगलन रोग

इस रोग में जड़ें सड़ जाती हैं तथा छाल के नीचे पीला पदार्थ जमा हो जाता है। बचाव के लिए समय पर बुआई करें तथा बीज को वीटावैक्स 0.1 प्रतिशत एवं ब्लाइटॉक्स 0.3 प्रतिशत से उपचारित करें।

पत्ती लपेटक कीट

इसकी इल्लियां पत्तियों को मोड़कर भीतर से खाती हैं। नियंत्रण हेतु ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें, लार्वा नष्ट करें तथा ट्राइकोग्रामा का 1.5 लाख/हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

मूंग, उड़द एवं अरहर में पौध संरक्षण

मूंग, उड़द एवं अरहर में पीला मोजैक रोग की रोकथाम के लिए डाइमेथोएट (30 ई.सी.) 1.0 लीटर अथवा मिथाइल-ओ-डेमेटॉन (25 ई.सी.) 1.0 लीटर को 600-800 लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार 10-15 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें या इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मि.ली./लीटर की दर से छिड़काव करें। अरहर में उकठा रोग, फाइटोफ्थोरा, अंगमारी एवं बांझपन रोग की रोकथाम के लिए डाइकोफॉल 2.5 मि.ली. तथा डाइमेथोएट 1.7 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करें। जिन खेतों में उकठा रोग का प्रकोप अधिक हो, वहां 3-4 वर्षों तक अरहर की खेती नहीं करनी चाहिए। अरहर के साथ ज्वार की सहफसल लेने से उकठा रोग का प्रकोप कुछ कम हो जाता है। ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें। फली छेदक कीट के नियंत्रण के लिए लगभग 70 प्रतिशत फलियां पकने पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. को 300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें तथा आवश्यकता पड़ने पर 15 दिनों बाद पुन: छिड़काव करें।

हरा तेला

इसके शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। प्रभावित पत्तियां पीली होकर नीचे की ओर मुड़ जाती हैं, बाद में सूखकर गिर जाती हैं तथा पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इसका प्रकोप जुलाई-अगस्त में अधिक होता है।

सफेद मक्खी

यह शिशु एवं प्रौढ़ अवस्था में पत्तियों से रस चूसकर पौधों को कमजोर बनाती है तथा चिपचिपे स्राव पर काली फफूंद विकसित हो जाती है। नियंत्रण के लिए मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. अथवा 1 लीटर नीम आधारित कीटनाशक या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 300 मि.ली. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से बारी-बारी छिड़काव करें।

सब्जी फसलें

फूलगोभी एवं बंदगोभी

अगस्त में फूलगोभी की मध्यम अगेती किस्में, जैसे-पूसा संकर-2, पूसा मेघना एवं पूसा शरद तथा मध्यम पछेती किस्में, जैसे पूसा पौषजा एवं पूसा शक्ति की नर्सरी तैयार करें।

बंदगोभी की पूसा अगेती एवं गोल्डन एकड़ किस्मों की भी इसी समय नर्सरी तैयार की जाती है। बीज की मात्रा 350-400 ग्राम/हैक्टर रखें। बुआई का उपयुक्त समय मध्यम अगेती किस्मों के लिए जुलाई अंत से अगस्त प्रारंभ तथा मध्यम पछेती किस्मों के लिए अगस्त अंत से सितंबर प्रारंभ तक है।

नर्सरी तैयार करने से पूर्व मृदा को फॉर्मेल्डिहाइड 25-30 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल से उपचारित कर पॉलीथीन शीट से ढक दें तथा लगभग 15 दिनों बाद बुआई करें। रोपाई से पूर्व खेत की तैयारी के समय 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद तथा 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से खेत में अच्छी तरह मिला दें।

डैम्पिंग ऑफ की रोकथाम हेतु एप्रॉन एस.डी. 35 अथवा थीरम 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें। एंथ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए डायथेन एम-45 अथवा बाविस्टीन 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। खरपतवार नियंत्रण हेतु रोपाई से पहले बेसालीन 2.5 लीटर अथवा स्टॉम्प 3.3 लीटर/हैक्टर की दर से छिड़काव कर हल्की सिंचाई करें।

फूलगोभी

चारा फसलें

सिंचाई

मक्का, ज्वार, बाजरा, लोबिया एवं ग्वार जैसी चारा फसलों में वर्षा न होने अथवा सूखे की स्थिति में आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें।

नाइट्रोजन की टॉप ड्रेसिंग

समय पर बोई गई अधिक उपज देने वाली बाजरा एवं ज्वार की दो कटाई वाली किस्मों में 30-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें। ध्यान रखें कि प्रयोग के समय भूमि में पर्याप्त नमी हो।

कटाई प्रबंधन

अगेती बोई गई चारा फसलों की कटाई समय पर करते रहें। यदि पुराने चरागाह में चारे की अच्छी बढ़वार हो गई हो, तो अगस्त के अंत में हरे चारे की एक कटाई कर लें। पिछले वर्ष स्थापित चरागाह में मृत पौधों के स्थान पर नई घास की रोपाई करें। यदि बहुवर्षीय घासों की रोपाई जुलाई में पूरी न हो सकी हो, तो इसे शीघ्र पूर्ण करें। गिनी, नेपियर, सिटेरिया तथा अन्य स्थापित बहुवर्षीय चारा घासों की कटाई 40-45 दिनों के अंतराल पर करते रहें तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई, उर्वरक, सड़ी गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट का प्रयोग करें।

भिंडी

भिंडी की फसल में बुआई के 50 दिनों बाद 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन अथवा 87 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से दूसरी टॉप ड्रेसिंग करें। सामान्यतः फूल आने के 8-10 दिनों के भीतर फलियों की तुड़ाई कर लें। फलछेदक कीटों के नियंत्रण के लिए मैलाथियॉन (50 ई.सी.) 500-600 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। ध्यान रखें कि कीटनाशी के प्रयोग के 7-8 दिनों तक फलियों की तुड़ाई न करें।

बंदगोभी के स्वस्थ कंद

अगेती फसल में रोपाई के तुरंत बाद तथा बाद में साप्ताहिक अंतराल पर, जबकि मध्यम एवं पछेती फसल में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।

गाजर एवं मूली

अगस्त तक गाजर की पूसा मेघाली, पूसा यमदाग्नि एवं पूसा वृष्टि तथा मूली की पूसा चेतकी एवं पूसा देसी किस्मों की बुआई की जा सकती है। ये किस्में लगभग 40-50 दिनों में तैयार हो जाती हैं। मूली की फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। कीटों के नियंत्रण हेतु 0.15 प्रतिशत मेटासिस्टॉक्स के घोल का एक छिड़काव अवश्य करें।

टमाटर

खरीफ मौसम में टमाटर की पूसा सदाबहार, पूसा रोहिणी, पूसा-120, पूसा गौरव, पी.एच.-2 तथा पी-एच-8 किस्मों की रोपाई अगस्त में की जा सकती है।

टमाटर

कद्दूवर्गीय सब्जियां

इन सब्जियों में 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन अथवा 54 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर बुआई के 30 एवं 45 दिनों बाद टॉप ड्रेसिंग करें। मचान बनाकर बेलों को चढ़ाने से उपज बढ़ती है तथा फल स्वस्थ एवं आकर्षक बनते हैं। सभी सब्जियों में उचित जल निकासी की व्यवस्था रखें। खीरा एवं अन्य कद्दूवर्गीय सब्जियों में फल छेदक कीटों का प्रकोप हो सकता है, इसलिए आवश्यकता अनुसार कीटनाशियों का छिड़काव करें। दवा के छिड़काव के कम से कम एक सप्ताह बाद ही फल तोड़ें तथा उपयोग से पहले उन्हें अच्छी तरह धो लें।

बैंगन एवं मिर्च

बैंगन एवं मिर्च की फसल में निराई-गुड़ाई, जल निकासी तथा रोग एवं कीटों के नियंत्रण पर विशेष ध्यान दें। बैंगन में रोपाई के 30 दिनों बाद 50 कि.ग्रा. तथा मिर्च में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें। इस समय बैंगन में कोक्सीनेला बीटल के नियंत्रण हेतु क्विनालफॉस 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी तथा शूट एवं फ्रूट बोरर के नियंत्रण हेतु कार्बारिल 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। मिर्च की फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई, सिंचाई एवं जल निकासी की व्यवस्था रखें। यदि पौधों की वृद्धि संतोषजनक न हो, तो 50 कि.ग्रा. यूरिया खड़ी फसल में दें। रोग एवं कीट नियंत्रण के लिए 0.2 प्रतिशत इंडोफिल-45 तथा 0.1 प्रतिशत मेटासिस्टॉक्स के घोल का एक छिड़काव अवश्य करें।

हल्दी

प्याज

हरी प्याज की रोपाई से पूर्व 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद अथवा 8 टन नाडेप कम्पोस्ट प्रति हैक्टर की दर से खेत में मिला दें। अंतिम जुताई के समय 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से खेत में अच्छी तरह मिला दें।

पालक

पूर्व में बोई गई फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। तैयार पत्तियों की समय-समय पर कटाई कर गड्डियाँ बनाकर बाजार भेजें।

हल्दी

फसल में पत्र लपेटक, भृंग एवं स्केल कीट के नियंत्रण हेतु 5 प्रतिशत नीम बीज का घोल अथवा नीम आधारित कीटनाशी (निम्बेसिडीन, अचूक, निमेरिन) का 2.0 मि.ली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

ग्वार

तैयार फलियों की समय पर तुड़ाई कर बाजार भेजें। कीटों के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रतिशत मेटासिस्टॉक्स के घोल का एक छिड़काव अवश्य करें।

बैंगन

परवल

परवल की रोपाई के लिए 15 अगस्त के आसपास का समय उपयुक्त रहता है। 2×2 मीटर की दूरी पर 50 सें.मी. व्यास एवं 30 सें.मी. गहरे गड्ढे खोदकर उनमें आधी मिट्टी, एक-चौथाई सड़ी गोबर की खाद, एक-चौथाई बालू, 100 ग्राम नीम की खली तथा 5 ग्राम फ्यूराडॉन मिलाकर जमीन से लगभग 15 सें.मी. ऊंचाई तक भर दें। यदि मचान पद्धति अपनाएं, तो पौधों की दूरी 1.5×1.5 मीटर रखें।

परवल

बागवानी फसलें

अमरूद

पौधों का रोपण 5×5 मीटर की दूरी पर करें तथा प्रत्येक गड्ढे में 25-30 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद मिलाएं। प्रथम वर्ष में प्रति पौधा 260 ग्राम यूरिया, 375 ग्राम सिंगल सल्फर फॉस्फेट तथा 500 ग्राम पोटेशियम सल्फेट दें। बाद के वर्षों

में पौधों की आयु के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करें। वर्षा ऋतु की अपेक्षा शरद ऋतु की फसल बेहतर गुणवत्ता की होती है, इसलिए आवश्यक कृषि कार्य उसी अनुसार करें।

जस्ता की कमी होने पर 2 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव अथवा 300 ग्राम जिंक सल्फेट पौधों की जड़ों में दें। मानसून के दौरान बागों में उचित जल निकासी रखें तथा नियमित निगरानी कर रोग दिखाई देने पर तुरंत उपचार करें।

लीची

बार्क इटिंग कैटरपिलर के नियंत्रण हेतु जीवित छिद्रों में पेट्रोल, नुवान अथवा फॉर्मेलिन में भीगी रूई भरकर चिकनी मिट्टी से बंद कर दें। बगीचे की नियमित सफाई से भी इस कीट का प्रकोप कम होता है। आम एवं लीची में रेड रस्ट तथा सूटी मोल्ड के नियंत्रण के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत अथवा ब्लाइटॉक्स 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करें। लीची में लीफ माइनर की रोकथाम हेतु मेटासिस्टॉक्स 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

कटहल

तनाबेधक कीट के नियंत्रण के लिए तने के छिद्र को पतले तार से साफ करें। इसके बाद नुवाक्रॉन के घोल (10 मि.ली./लीटर) अथवा पेट्रोल या केरोसिन तेल की 4-5 बूंदें रुई में भिगोकर छिद्र में भर दें तथा उसे गीली

आम

फलों की तुड़ाई के बाद रोगग्रस्त एवं सूखी शाखाओं की छंटाई कर उन्हें नष्ट कर दें। नए पौधों में 500 ग्राम नाइट्रोजन प्रति पौधा दें। शल्क कीट एवं शाखा गांठ कीट के नियंत्रण के लिए मिथाइल पैराथियॉन 1.0 मि.ली. अथवा डाइमेथोएट 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से 15 दिनों के अंतराल पर बारी-बारी से दो छिड़काव करें। तराई क्षेत्रों में गॉल मेकर की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफॉस 0.5 प्रतिशत अथवा डाइमेथोएट 0.06 प्रतिशत का छिड़काव करें। लाल रतुआ एवं एन्थ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। आम सिल्ली कीट की रोकथाम के लिए 5-10 अगस्त के बीच क्विनालफॉस 0.04 प्रतिशत का 10-15 दिनों के अंतराल पर तीन बार छिड़काव करें तथा प्रभावित टहनियों की गांठों की छंटाई कर दें।

कटहल

आंवला

एक वर्ष के पौधे में प्रति पौधा 10 कि.ग्रा. गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन एवं 35 ग्राम पोटाश का प्रयोग करें। पौधों की आयु बढ़ने के साथ उर्वरकों की मात्रा क्रमशः बढ़ाते हुए 10 वर्ष अथवा उससे अधिक आयु के पौधों में 100 कि.ग्रा. गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद, 500 ग्राम नाइट्रोजन तथा 350 ग्राम पोटाश का प्रयोग अगस्त में करें।

पपीता

चिकनी मिट्टी से बंद कर दें। इससे वाष्प के प्रभाव से सूंडी मर जाती है और तने का छिद्र धीरे-धीरे भर जाता है।

पपीता

पौधों में फूल आने की अवस्था पर 2 मि.ली. सूक्ष्म पोषक तत्वों को एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। कॉलर रॉट के प्रकोप से पौधे भूमि की सतह के पास से गलकर गिर जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए पौधशाला में रिडोमिल (2 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करें, खेत में जलभराव न होने दें तथा आवश्यकता पड़ने पर खड़ी फसल में भी रिडोमिल (2 ग्राम/लीटर) के घोल से ड्रेंचिंग करें।

केला

प्रति पौधा 100 ग्राम पोटाश तथा 55 ग्राम यूरिया पौधे से लगभग 50 सें.मी. दूरी पर गोलाई में डालकर हल्की गुड़ाई के साथ मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। पनामा विल्ट की रोकथाम के लिए बाविस्टीन 1.5 ग्राम/लीटर पानी के घोल से पौधों के चारों ओर की मिट्टी में 20 दिनों के अंतराल पर दो बार ड्रेंचिंग करें।

बेर

मिलीबग कीट के नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस (36 ई.सी.) 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

केला

नए बागों की स्थापना

नीबू, बेर, केला, जामुन, पपीता, आम, अमरूद, कटहल, लीची एवं आंवला के नए बागों की स्थापना का कार्य इस माह में पूरा कर लें। अपने क्षेत्र के अनुसार उपयुक्त एवं उन्नत किस्मों का चयन करें। नीबू एवं लीची में गूटी बांधने का यह उपयुक्त समय है।

पुष्प एवं सगंधीय पौधे

- फूलों के खेतों में वर्षा के अतिरिक्त पानी की निकासी की समुचित व्यवस्था करें। आवश्यकता अनुसार निराई-गुड़ाई कर खरपतवारों का समय पर नियंत्रण करें।
- गुलाब के नर्सरी स्टॉक की क्यारियों में बदलाई करें। जल निकासी की उचित व्यवस्था रखें तथा आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं रेड स्केल कीट का नियंत्रण करें।
- रजनीगंधा एवं ग्लैडियोलस में आवश्यकतानुसार सिंचाई, निराई-गुड़ाई तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों के मिश्रण का छिड़काव करें। रजनीगंधा के स्पाइक की समय पर कटाई करते रहें।
- गेंदा तथा अन्य शरदकालीन मौसमी फूलों की नर्सरी तैयार करने के लिए यह उपयुक्त समय है।
- ग्रीष्मकालीन फूलों का मौसम समाप्त होने पर उन्हें धीरे-धीरे निकाल दें तथा क्यारियों की खुदाई करें। मिट्टी को रोगमुक्त बनाने के लिए आवश्यक उपचार करें और शीतकालीन फूलों की बुआई की तैयारी प्रारंभ कर दें।

गुलाब

रजनीगंधा

नीबू

नीबू में सिट्रस कैंकर रोग के लक्षण पहले पत्तियों तथा बाद में टहनियों, कांटों एवं फलों पर दिखाई देते हैं। इसकी रोकथाम के लिए गिरी हुई पत्तियों को एकत्र कर नष्ट करें तथा रोगग्रस्त टहनियों की छंटाई कर बोर्डो मिश्रण (5:5:50) का छिड़काव करें। ब्लाइटॉक्स 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव भी करें। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण हेतु मैलाथियॉन 2 मि.ली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। नीली फफूंद रोग की रोकथाम के लिए फलों को बोरेक्स अथवा नमक से उपचारित करें। कार्बेण्डाजिम अथवा थायोफनेट मिथाइल 0.1 प्रतिशत से उपचारित करने पर भी रोग नियंत्रित रहता है।

विज्ञान आधारित कृषि विकास का नया संकल्प

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (भाकृअनुप) ने 16 जुलाई 2026 को नई दिल्ली में अपना 98वां स्थापना दिवस मनाते हुए विज्ञान आधारित, जलवायु अनुकूल एवं किसान केंद्रित कृषि विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को पुनः दोहराया। वर्ष 1928 में स्थापित भाकृअनुप पिछले 98 वर्षों से कृषि अनुसंधान, शिक्षा एवं प्रसार के माध्यम से देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। स्थापना दिवस समारोह में विकसित भारत 2047 के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अनुसंधान, नवाचार, तकनीक हस्तांतरण तथा किसानों की आय वृद्धि के लिए नई रणनीतियों और उपलब्धियों को साझा किया गया।

नई दिल्ली में आयोजित समारोह के मुख्य अतिथि केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण तथा ग्रामीण विकास मंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा कि भाकृअनुप भारत की कृषि प्रगति की प्रमुख प्रेरक संस्था है। इन्होंने बताया कि वर्ष 2025-26 के दौरान परिषद ने 44 फसलों की 386 उन्नत किस्में विकसित की हैं, जिनमें 94 प्रतिशत जलवायु अनुकूल तथा 29 जैव संवर्धित (बायोफोर्टिफाइड) किस्में शामिल हैं। इन्होंने यह भी कहा कि 'किसान कृषि की आत्मा है और वैज्ञानिक उसका मस्तिष्क।' इसलिए अनुसंधान किसानों की वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए। अपने वक्तव्य में इन्होंने दलहन एवं तिलहन में आत्मनिर्भरता, गुणवत्तापूर्ण कृषि शिक्षा, कृषि तकनीकों के व्यावसायीकरण तथा कृषि विज्ञान केंद्रों (केवीके) के माध्यम से तकनीकों के व्यापक प्रसार पर भी विशेष बल दिया।

केंद्रीय मत्स्य पालन, पशुपालन एवं डेरी मंत्री श्री राजीव रंजन सिंह ने कृषि, पशुपालन और मत्स्य पालन क्षेत्रों में विकसित तकनीकों को शीघ्र किसानों तक पहुंचाने के लिए कृषि विज्ञान केंद्रों की भूमिका को और मजबूत बनाने की आवश्यकता बताई। राज्य मंत्री श्री भागीरथ चौधरी ने खाद्यान्न आत्मनिर्भरता का श्रेय वैज्ञानिकों और किसानों के संयुक्त

कृषि अनुसंधान एवं नवाचार पर आधारित प्रकाशनों का लोकार्पण

प्रयासों को देते हुए प्राकृतिक खेती, जलवायु अनुकूल कृषि तथा मृदा स्वास्थ्य संरक्षण को भविष्य की आवश्यकता बताया। वहीं प्रो. एस.पी. सिंह बघेल ने कृत्रिम गर्भाधान, यौन-सॉर्टेड सीमेन, भ्रूण प्रत्यारोपण, सूक्ष्म सिंचाई, मत्स्य पालन तथा नैनो उर्वरकों जैसी आधुनिक तकनीकों को किसानों की आय बढ़ाने का प्रभावी माध्यम बताया।

समारोह में डेयर सचिव एवं भाकृअनुप के महानिदेशक डा. मांगी लाल जाट ने परिषद की वार्षिक उपलब्धियां प्रस्तुत करते हुए बताया कि वर्ष 2025-26 में कृषि, बागवानी, पशुधन और मत्स्य क्षेत्रों में उत्पादन वृद्धि से लगभग 1.70 लाख करोड़ रुपये का अतिरिक्त आर्थिक मूल्य सृजित हुआ, जिसमें कृषि अनुसंधान का योगदान लगभग 55 हजार करोड़ रुपये रहा। इन्होंने बताया कि भाकृअनुप की विकसित तकनीकों का लाभ सीधे लगभग एक करोड़ किसानों तक पहुंचा, जबकि मीडिया एवं सोशल मीडिया के माध्यम से पांच करोड़ से अधिक किसानों तक वैज्ञानिक जानकारी पहुंची। साथ ही 18 अंतर्राष्ट्रीय समझौता ज्ञापनों के माध्यम से वैश्विक सहयोग को भी विस्तार मिला।

स्थापना दिवस के अवसर पर 43 उन्नत फसल किस्मों, 17 नवीन कृषि प्रौद्योगिकियों तथा 14 प्रकाशनों का लोकार्पण किया गया। नई तकनीकों में लवणीय एवं क्षारीय भूमि के लिए जलवायु अनुकूल धान किस्में, निर्यातोन्मुख आम उत्पादन तकनीक, भारत का पहला स्वदेशी अफ्रीकन स्वाइन फीवर टीका, डिजिटल स्वाइन डिजीज एटलस तथा छोटे किसानों के लिए कम लागत वाला कसावा हार्वेस्टर प्रमुख रहे। साथ ही 150 अस्थायी दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों को नियमित नियुक्ति पत्र प्रदान किए गए।

कृषि तकनीकों के व्यावसायीकरण और किसानों तक उनकी त्वरित पहुंच सुनिश्चित करने के उद्देश्य से 51 उद्योग साझेदारों के साथ 72 समझौता ज्ञापनों पर भी हस्ताक्षर किए गए। यह पहल भाकृअनुप द्वारा विकसित तकनीकों को तेजी से खेतों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। ■

प्रकाशन लोकार्पण

समारोह की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि हिंदी प्रकाशनों का लोकार्पण भी रही। इस अवसर पर 'खेती' का "आजीविका उद्यमिता" विशेषांक जारी किया गया, जिसमें कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में रोजगार, स्वरोजगार, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन तथा सफल कृषि उद्यमिता से संबंधित वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक जानकारी संकलित की गई है। इसके साथ 'फल-फूल' का "जैव विविधता" विशेषांक भी प्रकाशित किया गया, जो बागवानी क्षेत्र में जैव विविधता संरक्षण, सतत उपयोग, नवाचारों और प्रेरणादायी सफलता की कहानियों को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त 'श्री अन्न : प्रकृति एवं स्वास्थ्य रक्षक' पुस्तक का लोकार्पण किया गया, जिसमें श्री अन्न की पोषणीय विशेषताओं, उन्नत उत्पादन तकनीकों, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन एवं विपणन की वैज्ञानिक जानकारी दी गई है। वहीं 'आधुनिक सस्य क्रियाएं' पुस्तक में आधुनिक फसल उत्पादन तकनीकों, संसाधन-कुशल प्रबंधन तथा वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों को सरल एवं व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया गया है।

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹50

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली-110092 से लेजरटाईपसैट एवं मुद्रित। संपादक: सुनीता अरोड़ा